Con. 3. XI.10.49
320

अंक 11
संख्या 10

बृहस्पतिवार
24 नवम्बर
सन् 1949 ई.

भारतीय संविधान सभा

के

वाद-विवाद

की

सरकारी रिपोर्ट

(हिन्दी संस्करण)

विषय-सूची

पृष्ठ

प्रतिज्ञा ग्रहण तथा रजिस्टर पर हस्ताक्षर 4063
संविधान का मसौदा–(जारी) 4063–4138

भारतीय संविधान सभा

बृहस्पतिवार, 24 नवम्बर, सन् 1949

भारतीय संविधान सभा, कान्स्टीट्यूशन हाल, नई दिल्ली में प्रातः दस बजे अध्यक्ष महोदय माननीय डॉ. राजेन्द्र प्रसाद के सभापतित्व में समवेत हुई।

प्रतिज्ञा ग्रहण तथा रजिस्टर पर हस्ताक्षर

***अध्यक्षः** मुझे मालूम हुआ है कि कुछ नये सदस्य—विन्ध्य प्रदेश के सदस्य आ गये है। उन्हें अब प्रतिज्ञा ग्रहण करनी है और रजिस्टर पर हस्ताक्षर करने हैं।

निम्नलिखित सदस्यों ने प्रतिज्ञा ग्रहण की तथा रजिस्टर पर हस्ताक्षर किये।

1.	कैप्टेन अवधेश प्रताप सिंह	विन्ध्य प्रदेश का संयुक्त राज्य
2.	श्री शम्भू नाथ शुक्ल	
3.	पंडित राम सहाय तिवारी	
4.	श्री मन्नू लाल जी द्विवेदी	

संविधान का मसौदा–(जारी)

***अध्यक्षः** अब संविधान के मसौदे पर हम बहस जारी करने जा रहे हैं। सदस्यों को मैं यह बता देना चाहता हूं कि डॉक्टर अम्बेडकर के प्रस्ताव पर 77 सदस्य अब तक बोल चुके हैं। और अभी सूची पर 54 सदस्य रह गये हैं जो बोलना चाहते हैं। इसके लिये हमारे पास केवल आज का दिन रह गया है और शायद कल एक घंटा भी हमें मिल जाये। इसलिये बाकी सदस्य भी अगर इसी रफ्तार से बोलेंगे जिससे पूर्ववक्ता बोले हैं तो सबके लिये बोलने का मौका पाना मुश्किल होगा। यह बात मैं सदस्यों पर छोड़ता हूं कि या तो वे स्वेच्छानुसार मनमाना समय लेकर अन्य सदस्यों को बोलने से वंचित रखें या यहां आकर केवल चन्द शब्द बोल दें ताकि उनका नाम भी रिकार्ड में आ जाये और जहां तक उनसे हो सके औरों को भी इस अवसर पर बोलने का मौका दें।

***श्री गुप्तनाथ सिंह** (बिहारः जनरल): मैं एक सुझाव पेश करना चाहता हूं श्रीमान। ऐसा मालूम पड़ता है कि बहुत से सदस्य ऐसे हैं जो बोलने के लिये इच्छुक हैं। मेरा सुझाव यह है कि जो लोग बोलना चाहते हैं उनसे यह कहा जाये कि वह अपना लिखित भाषण पेश कर दें और यह मान लिया जाये कि इन सदस्यों ने अपने भाषण पढ़कर सुना दिये हैं।

***अध्यक्ष:** अपने नियमों में ऐसी कोई व्यवस्था नहीं है जिसके अनुसार हम लिखित भाषणों को पढ़ा हुआ मान लें क्योंकि भाषण यदि पढ़कर सुनाये भी जायें तो उनके बारे में यही माना जायेगा कि वह यह दिये गये हैं। इस लिये सदस्यों से मैं केवल यही कहूंगा कि वह न केवल अपना ही बल्कि औरों का भी ख्याल रखें। ज्योंही कोई सदस्य पांच मिनट ले लेगा मैं घंटी बजा दूंगा।

चौधरी रणवीर सिंह (ईस्ट पंजाब: जनरल): अध्यक्ष महोदय, मैं संविधान के ऊपर अपने विचार प्रकट करने से पहले राष्ट्रपिता महात्मा गांधी, नेता जी सुभाषचन्द्र बोस और दूसरे देशभक्तों के आदर में, जिन्होंने देश की वेदी पर अपने जीवन की कुर्बानी दी और तरह तरह की तकलीफें उठाई, श्रद्धा के फूल भेंट करना चाहता हूं।

सभापति महोदय, आज बहुत सारे भाई इस बात का गिला जाहिर करते हैं कि हमने संविधान के बनाने में काफी वक्त लिया है, लेकिन इस बात से कोई इन्कार नहीं कर सकता कि जिस वक्त यह सभा बैठी थी उस वक्त हिन्दुस्तान एक गुलाम देश था और 600 से ज्यादा हिस्सों में बंटा हुआ देश था, उसमें तरह तरह के आदमी थे और तरह तरह की पार्टियां थीं जो देश का बटवारा करना चाहती थीं। इस तीन साल के अन्दर जो देश में तबदीली हुई है वह इतिहास के अन्दर एक निराली चीज है। इसमें हमारा देश दो हिस्सों में बंटा, लेकिन इसके बावजूद कोई आदमी इस बात से इन्कार नहीं कर सकता कि आपकी प्रधानता के अन्दर हम भारत के इतिहास में भारत को पहली दफा इतने बड़े और मज़बूत रूप में स्थापित करेंगे जितना कि वह पहले कभी नहीं था।

कोई भाई कह सकते हैं कि अंग्रेज़ों के राज्य में भारत इससे ज्यादा बड़ा देश था, पर इस बात के मानने से कोई इन्कार नहीं कर सकता कि अंग्रेज़ी राज्य में भारत में जो 562 रियासतें थीं उनका अधिकार अजीब था और उनका राज्य शासन भी अजीब ढंग से चलता था। कोई आदमी इससे इन्कार नहीं कर सकता कि सन् 57 से पहले अंग्रेज़ों ने कोशिश की थी कि भारत की रियासतों को तोड़कर एक मजबूत राज्य बना लें, लेकिन अंग्रेज़ थोड़ी ही रियासतों को तोड़ने में कामयाब हुए थे कि देश के अन्दर उथल पुथल हुई और अंग्रेज़ों को यह ख्याल छोड़ना पड़ा। पर हमने आपकी प्रधानता में और हमारे नेता पंडित जवाहर लाल नेहरू और सरदार पटेल के नेतृत्व में महात्मा गांधी के बताये हुए रास्ते पर चल कर देश में से एक नहीं सैंकड़ों रियासतों को शान्ति से समझाया बुझाया और उन को देश के अन्दर संगठित किया और वह देश जो कि इस सभा के शुरू होते समय 600 से ज्यादा हिस्सों में बंटा था अब मुश्किल से 27 प्रान्तों का देश बन जायेगा। समझता हूं कि थोड़े ही दिनों में 15 या 20 हिस्सों में ही रह जायेगा। इस तरह देश को इतने कम हिस्सों में संगठित कर के हमने एक मज़बूत संघ की बुनियाद डाली है। इससे कोई इन्कार नहीं कर सकता कि देर ज़रूर हुई पर उस देर के अन्दर काम बहुत ज्यादा हुआ। मैं समझता हूं कि अगर हम एक साल के अन्दर अन्दर यह विधान बना लेते तो इस बात से भी इन्कार नहीं किया जा सकता कि यहां कितना कम्युनिटीज़ के लिये रिजरवेशन होता। वह जो झगड़ा या बीमारी थी उसको हमने दूर कर दिया और यह कामयाबी हमारे नेताओं की होशियारी की वजह से मिली।

सभापति महोदय, मैं अब संविधान की दो चार धाराओं पर, जिन पर मैं बहुत ज्यादा महसूस करता हूं, कुछ कहना चाहता हूं। इस संविधान में हमने बालिग मताधिकार को मानकर हर एक हिन्दुस्तानी को राजनीतिक तौर पर आज़ाद किया है और इसी तरह से धारा 17 के द्वारा बेगार खत्म करके और धारा 23 के द्वारा छुआछूत को गैर कानूनी करार देकर हमने सामाजिक तौर पर देश के हर एक अंग को आजाद किया है। इससे आगे चल कर हमने जहां तक आर्थिक आजादी का ताल्लुक है, धारा 31 (4) को मान कर देश के अन्दर एक ऐसी हालत पैदा की है कि जिससे जैसे हमने अपने नेता पंडित जवाहर लाल नेहरू और वल्लभभाई पटेल के नेतृत्व में हिन्दुस्तान की 562 रियासतों का मसला हल किया है, उसी तरह मुझे पूर्ण आशा है कि अगले साल के अन्दर हिन्दुस्तान में जमींदारी प्रथा जो कि एक बोझ की तरह है और देश की तरक्की में रोड़ा बनी हुई है वह भी समाप्त हो जायेगी, और पंजाब जैसे प्रदेश में जिसका कि मैं रहने वाला हूं और जो कि आम तौर पर छोटे छोटे किसान मालिकों का देश है, जहां पर दस फीसदी बड़े बड़े जमींदार हैं मैं समझता हूं कि उनका मसला भी शान्ति के साथ हल हो जायेगा। और जो किसान बे जमीन हैं उनको आर्थिक तौर पर हम इस धारा के तहत आजाद कर पायेंगे। इसी तरह से जो भाई खेत मज़दूर हैं या कारखाने के मज़दूर हैं उनको भी हम इस संविधान के द्वारा आजाद कर सकेंगे। लेकिन सभापति महोदय, जिस इन्टरेस्ट का मैं प्रतिनिधित्व करता हूं यानी खेत मालिक किसान, उनको मुझे खेद है कि इस संविधान के अन्दर कुछ न कुछ पहले से भी पीछे फेंका गया है। उनको आर्थिक आज़ादी तभी मिल सकती थी जब ऐसा कायदा माना जाता कि जिस चीज़ को वह पैदा करते हैं, उनको उस चीज को जिस कीमत पर वह उससे पैदा करते हैं उससे कम कीमत पर बेचने को मजबूर न किया जा सकता होता। अगर हम ऐसा मानते और इस विधान में कोई ऐसी धारा पैदा कर देते तो उनको भी हम आर्थिक लूट से बचा सकते थे। लेकिन बदकिस्मती से हमने 19 (एफ) को मान लिया है जिसका असर हमारे प्रान्त पर बुरा पड़ता है। हमारे इन्तकाल अराज़ी का कानून है। मैं मानता हूं कि उसके अन्दर कुछ खामियां हैं, लेकिन इस बात से कोई इन्कार नहीं कर सकता कि इस कानून के द्वारा पंजाब के लाखों किसानों को जो दिन रात मेहनत करते हैं यह फायदा हुआ है कि उनकी ज़मीनें उनके पास रह सकती हैं। मुझे पूर्ण आशा है और विश्वास है कि हमारे हाउस के एक बहुत बड़ी तादाद की इच्छा है और मुझे पूर्ण आशा है कि आप हाउस की इस इच्छा को ठुकरायेंगे नहीं। इस विधान के अन्दर एक धारा है जिसके द्वारा प्रधान को यह अख्तियार है कि वह जो कानून थोड़ा बहुत संविधान से टकराते हों उनको अमेंड कर सकता है या रिपील कर सकता है। इसलिये मैं आपसे विशेषतया यह प्रार्थना करता हूं कि इससे लाखों किसानों का सम्बन्ध है और आप इसे अमेंड बेशक कर दें। हमें ऐतराज नहीं कि आप हरिजनों को जो जमीन के अन्दर काम करते हैं उनको अधिकार दे दें कि वह जमीन खरीद सकें, लेकिन इतनी मैं प्रार्थना करता हूं कि कम से कम ऐसी हालत न पैदा होने दीजिये कि जिससे वह आदमी जिस का सम्बन्ध जमीन से बिल्कुल नहीं रहा हो वह जमीन को खरीद सके। अगर ऐसा हुआ तो इसमें शक नहीं कि लूट खसोट होने लगेगी और ज़मींदारी अबालीशन के फायदे का खातमा हो जायेगा।

[चौधरी रणबीर सिंह]

एक चीज जिस के बारे में हाउस में किसी ने ज़िक्र नहीं किया और जिसके बारे में मैं बहुत ज़्यादा महसूस करता हूं वह चीज़ आती है 327 में हलकाबन्दी के सिलसिले में। मैं यह मानता हूं कि हिन्दुस्तान के अन्दर देहात जो हैं वह बहुत पिछड़ा हुआ इलाका है और अगर शहर वालों को देहात वालों के हल्के के साथ मिला दिया गया तो उनके साथ यह एक बड़ी भारी ज़्यादती होगी। हम हिन्दुस्तान में राष्ट्र भाषा हिन्दी को इतनी जल्दी लागू नहीं कर सके इसका कारण यह था कि कुछ लोगों को यह ख्याल था कि उनकी नौकरी खुस जायेगी लेकिन वह आदमी जिन्हें न बोलना आता है, न जिनके पास प्रेस है न लीडरशिप है, उनके साथ आप एक बड़ा भारी घोर अन्याय करेंगे अगर शहर और देहात की हल्के बन्दी को एक कर देंगे तो इस संविधान के द्वारा उनको अलग भी रखा जा सकता है और एक भी किया जा सकता है। मैं यह उम्मीद करता हूं कि बाद में जो कमीशन इस काम के लिये बनेगा वह शहर और देहात के हलकों को अलहदा अलहदा रखेगा।

मैं दो तीन बातों के ऊपर अपने विचार और प्रकट करना चाहता था, लेकिन मैं दूसरे साथियों के समय पर छापा नहीं मारना चाहता और समाप्त करता हूं।

श्री मानिक लाल वर्मा (यूनाइटेड स्टेट ऑफ राजस्थान): अध्यक्ष महोदय, इस बात का धन्यवाद देता हूं कि मुझे आज बोलने का मौका दिया गया है मगर अफसोस इस बात का है कि इस कंट्रोल का मैं शिकार हुआ हूं। आज तक मुझे कभी भी बोलने का मौका नहीं मिला। श्री ब्रजेश्वर प्रसाद जी को और श्री कामथ जी को यहां पर बोलने का काफी अवसर मिला। अध्यक्ष महोदय से अनुरोध करूंगा कि अगर एक दो मिनट अगर मैं ज़्यादा ले लूं तो वह मुझे निभा लें।

मैं पहले विधान बनाने वाले महोदय डॉक्टर अम्बेडकर साहब और दूसरे सज्जनों को बधाई देता हूं। दूसरा जो हमारे विधान में बालिग मताधिकार रखा गया है यह ठीक है। हिन्दुस्तान में इसका प्रयोग हो रहा है। महात्मा गांधी जी की इच्छा थी कि हमारे देहातों और गांवों की पंचायतों से और उसके बाद जिलों की पंचायतों से लोग चुनकर आयेंगे वह राष्ट्र की समस्या को ठीक तरह से समझने वाले होंगे। अगर यह नया प्रयोग सफल हुआ तो वह ठीक बात होगी। हम लोगों ने बालिग मताधिकार का नारा लगाया अवश्य है किन्तु इस असफल प्रयोग को करना गलत बात होगी। महात्मा जी की भी यह यही इच्छा थी और इस को हमें ज़रूर पूरा करना चाहिये।

इसके बाद मुझे हमारे पूज्य ठक्कर बापा को जिन्होंने कई वर्षों से हरिजनों की सेवा में प्रगतिशील कदम उठाये हैं इसके लिये मैं उनको धन्यवाद देता हूं। हमारे विधान में हरिजनों का जो स्थान रखा गया है उसके लिये मैं विधान के निर्माताओं को

धन्यवाद देता हूं। न्याय और शासन के प्रथक्करण में यह हमारा एक नया प्रयोग है और हम इसमें कामयाब होंगे या नहीं? यह भविष्य बतायेगा। यह हमारी आजादी की शुरूआत है। मैं आशा करता हूं कि हमारा यह प्रयोग सफल ही होगा।

रियासतों के अन्त के बारे में हमारे माननीय नेता सरदार वल्लभभाई पटेल बधाई के पात्र हैं जिन्होंने 584 रियासतों का अन्त किया है। यह सही बात है कि हम जो रियासत के रहने वाले हैं, जिन को अनुभव है, वहां की सामन्तशाही के जुल्मों का, हम लोगों को अनुभव है और इस वास्तविक स्वराज्य का। हम रियासतों वाले ही इस फल का अनुभव कर सकते हैं। मैं इसके साथ ही यह बात भी कहना चाहता हूं कि हमारे राष्ट्र के शरीर में जो बड़ी बड़ी गांठें सामन्तशाही की थीं वह तो खत्म हो गई हैं। मैं आशा करता हूं कि इन फुनसियों को सरदार पटेल साहब जल्द से जल्द खत्म करेंगे। क्योंकि आज भी वहां भयानक स्थिति है। जहां से मैं आया हूं, राजस्थान से, वहां पर जागीरदारों में दो तरह के वर्ग हैं। एक वर्ग तो यह समझ कर कि अब हमारी जागीरदारी का अन्त होने वाला है वह खेती और दूसरे किसी न किसी उद्योग धंधों में लग गये हैं। जागीरदारों में दूसरा वर्ग वह है जो आंतक फैला कर भारत सरकार को प्रभावित करना चाहता है। भारत सरकार के रियासती सचिवालय को हर तरह से डराने और आतंक फैलाना शुरू कर दिया है, जिससे वह समझते हैं कि अपनी जागीरदारी खत्म नहीं होगी। इस विश्वास के अनुसार उन्होंने डाकेजनी शुरू कर दी है। मैं आपका ध्यान इस ओर दिलाना चाहता हूं और आशा करता हूं कि जल्दी से जल्दी इन की शक्ति का अन्त किया जायेगा।

इसके बाद मैं भारत सरकार और अध्यक्ष महोदय का ध्यान हमारे प्रान्त की आय के बारे में आकृष्ट करना चाहता हूं। बीकानेर, जोधपुर और उदयपुर रेलवे जिसका चार्ज इस अप्रैल से लिया जा रहा है और जिसका मुआवज़ा प्रान्त को नहीं दिया जायेगा और जिस की आमदनी का हिस्सा प्रान्त को नहीं मिलेगा। कस्टम हमारे प्रान्त में खत्म हो रहा है जिससे करीब 6 और 7 करोड़ की आदमनी समाप्त हो जायेगी। हमारे प्रान्त का नया निर्माण हो रहा है और उसको हर प्रकार से सहायता दी जानी चाहिए और केन्द्र से हर प्रकार का सहयोग मिलना चाहिये।

इसके बाद मैं आपका थोड़ा सा ध्यान इस बात की ओर भी ले जाना चाहता हूं। वह यह है कि हमारे राजस्थान में जो बड़ी बड़ी राजधानियां मसलन भरतपुर, अलवर, बीकानेर, कोटा, जोधपुर, उदयपुर, डूंगरपुर, बांसवाड़ा और किशनगढ़ थीं, इनके राजा महाराजाओं के साथ बहुत से चारण कार्य, पंडित कारीगर थे और हजारों आदमी काम पर लगे हुए थे। इन हजारों आदमियों के बेकार होने पर वहां का व्यापार ठप हो गया है। भारत सरकार की ओर से जितने भी डिपार्टमेंट दिल्ली की राजधानी से बाहर जा रहे हैं उनको इन राजधानियों में भेजने का अवश्य प्रयत्न किया जाये ताकि वहां की आर्थिक स्थिति खराब न होने पावे।

[श्री मानिक लाल वर्मा]

इसके साथ ही हिन्दुस्तान की जो बड़ी बड़ी योजनायें बन रही हैं उनका अमल इन राजधानियों में किया जाये। क्योंकि प्रान्तीय सरकार की इतनी हैसियत नहीं है कि वह इस तरह की योजनाओं को कार्यान्वित करे जब कि उसकी कस्टम और रेलवे से होने वाली आय को भारत सरकार ने ले लिया है। भारत सरकार द्वारा जो जो ट्रेनिंग केन्द्र खोले जायें और बान्ध का काम शुरू हो वह इन रियासतों में किया जाये।

अब मैं थोड़ा राजस्थानी भाषा के बारे में भी कहना चाहता हूं। जो कि डेढ़ करोड़ की भाषा है। मैं यहां पर एक उदाहरण देता हूं। जिस समय महाराणा प्रताप अकबर के साथ लड़ रहे थे तो उस समय पृथ्वी राज बीकानेर को यह खबर लगी कि प्रताप अब थक कर अकबर से समझौता कर रहा है, पृथ्वीराज ने महाराणा प्रताप को पत्र इस काव्य में लिखा:—

"राखूं मूंछा पाण, कन पटकूं निज तन करद।
दीजे लिख दीवाण, इणदो महली बात इकै।।

इसके जवाब में महाराणा प्रताप ने निम्न प्रकार का उत्तर भेजा:—

"निहचे रखसी अ नम्यो, इ तन सूं इकलिंग।
ऊगे जांही ऊगसी, प्राची बीच पतंग।।"

यह राजस्थानी भाषा का उदाहरण है जो वीरता से भरी हुई है। जिसे सीख कर बंगाल ने वीरता सीखी और बंगाल ने राष्ट्र प्रेम की भावना को बढ़ाया जो देश में फैली। इस राजस्थानी भाषा को हमारे इस विधान में ज़रूर जगह मिलनी चाहिये।

एक आखिरी बात फिर कहनी रह गई है जो मुझे एक चोट की तरह मालूम हो रही है, इस विधान के द्वारा सिरोही का बटवारा हो गया है और उसमें से आबू गुजरात में मिला लिया गया है। इस बारे में आपका थोड़ा ध्यान दिलाना चाहता हूं। यह ठीक है कि आबू को गुजरात में मिला दिया गया है। और यह भारत सरकार के अधिकार की बात है वह कुछ कर सकती है। हम लोग जो कांग्रेस में हैं, जिनके सर झुके हुए हैं कांग्रेस के अनुशासन से हम लोग कुछ बोल नहीं सकते हैं। जिस तरह से आबू को गुजरात में मिलाया गया है उसी तरह से अब बासवाड़ा, डूंगरपुर और उदयपुर तथा दूसरे स्थान का नम्बर आने वाला है। आज कल गुजराती भाई जिस तरह यहां गुजरात का नारा लगा रहे हैं उसका जहर राष्ट्र में फैले बिना नहीं रहेगा। इस प्रकार की भावना ठीक नहीं है। इससे हमारा राष्ट्र कमजोर हो जायेगा। अगर आबू के सम्बन्ध में न्याय करना हो तो बंगाल, पंजाब और महाराष्ट्र के व्यक्तियों का एक कमीशन नियुक्त किया जाय उसके निर्णय के बाद पता लगेगा कि आबू राजस्थान का है अथवा गुजरात का। और उसके अनुसार भारत सरकार फैसला दे। अब जो कुछ भी आबू के सम्बन्ध में फैसला हो वह न्याय से हो और उसके लिये हम लोग तैयार हैं।

यहां पर एक चर्चा यह भी चल रही है कि राजस्थान और गुजरात एक हो दलीलमत है कि डेढ़ करोड़ का प्रान्त चल नहीं सकता। इस प्रकार सारे देश में होता है तो मैं स्वागत करूंगा। आर्थिक और राजनैतिक दृष्टि से। एक दूसरे का जोड़ बैठाया जा सकता है। डेढ़ करोड़ के बजाय तीन चार करोड़ का प्रान्त बनाया जा सकता है। समझौता द्वारा कोई निर्णय पसन्द हो सकता है अन्यायपूर्वक नहीं।

अध्यक्ष महोदय से मैं प्रार्थना करूंगा कि इस बारे में राजस्थान के साथ न्याय हो।

***श्री ब्रजेश्वर प्रसाद** (बिहार: जनरल): मैं खड़ा हो रहा हूं संविधान को सीमित समर्थन देने के लिये और अगर मगर के साथ इसका समर्थन करने के लिये। अगर संविधान में हिन्दी को राष्ट्र भाषा न बनाया गया होता और अस्पृश्यता न उठाई गई होती तो मैं कभी इसका समर्थन न करता। मैं संविधान का उसी हद तक समर्थन करता हूं जहां तक कि यह एकात्मक है। मैं संघ व्यवस्था, प्रान्तीय स्वशासन, संसदीय पद्धति, वयस्क मताधिकार तथा मूलाधिकारों के सर्वथा विरुद्ध हूं।

संविधान पर आदर्शवाद की कत्तई कोई छाप नहीं पड़ने पाई है। यह संविधान ऐसा संविधान है जो देशवासियों की संस्कृति और उनकी प्रकृति के लिए सर्वथा अपरिचित है। यह वकीलों का संविधान है। यह बनाया गया है मध्यमवर्ग और पूंजीपति वर्ग के हितों को उनके आर्थिक एवं राजनैतिक हितों को स्थायित्व देने के लिए। अनुच्छेद 24 के द्वारा प्रगति का मार्ग अवरुद्ध कर दिया गया है। उत्पादन साधनों पर व्यक्ति के स्वामित्व को जब तक खत्म नहीं किया जाता भारत का भविष्य उज्जवल हो नहीं सकता है।

***एक सदस्य:** माननीय सदस्य से मैं यह अनुरोध करूंगा कि वह अपने भाषण को कृपया धीरे-धीरे पढ़ें ताकि हम समझ सकें। वह तूफान मेल की रफ्तार से पढ़ रहे हैं।

***श्री ब्रजेश्वर प्रसाद:** मैं बिल्कुल साफ साफ पढ़ रहा हूं। माननीय अध्यक्ष महोदय जब तक हमें समय नहीं देते हैं मैं धीरे धीरे नहीं बोलूंगा। वह मुझे इसके लिये समय नहीं दे सकते हैं।

अनुच्छेद 24 में जो प्रतिकर का उपबंध रखा गया है वह प्रगति के मार्ग में रुकावट डालने वाला है। वर्तमान भारत-शासन-अधिनियम में समुपयुक्त संशोधन कर देने से ही हमारी आज की ज़रूरतें अच्छी तरह पूरी हो जा सकती थीं। हम अभी अन्तरावर्ती काल से होकर गुज़र रहे हैं। क्रांति हमारे दरवाज़े पर खड़ी है। हम इस समय इस स्थिति में नहीं हैं कि आने वाली शताब्दी की ज़रूरतों का ठीक ठीक अनुमान कर सकें। चारों ओर अवनति दिखाई दे रही है।

उस समय संविधान बनाने की हमें कोई ज़रूरत नहीं थी। हमें इस बात का अभी पता नहीं है कि निकट भविष्य में भारत किस ओर जाना चाहेगा। उसके सामने तीन रास्ते हैं या तो वह उस रास्ते को अपना सकता है जिस पर आज

[श्री ब्रजेश्वर प्रसाद]

मास्को चल रहा है या उस पथ को अपना सकता है जिस पर इंग्लैंड और अमेरिका चल रहे हैं। उसके सामने एक तीसरा मार्ग भी है और मेरी समझ से तो इसी मार्ग को अपनाना हमारे लिये सर्वोत्तम होगा। यदि भारत की रगों में, उसके खून में कुछ भी जान और गर्मी रह गई है तो वह अपनी संस्कृति और अपनी परम्परागत विचारधारा के प्रति निष्ठ बना रहेगा और दुनिया की राजनीति में एक तृतीय पथ के नेता के रूप में अपना स्वतंत्र अस्तित्व बनाये रखेगा।

भारत और रूस के बीच मित्र भाव स्थापित करने में यह संविधान रुकावट डालता है। अनुच्छेद 24 को रख कर हमने पूंजीपतियों को सहारा दिया है और इससे पूंजीवादी व्यवस्था को प्राणदान मिल गया है। पूंजीवादी राज्यों और सोवियत रूस के बीच कभी कोई सच्चा सहयोग हो नहीं सकता है।

यदि भारतवर्ष को अपनी प्राचीन परम्परा के प्रति निष्ठावान बना रहना है तो उसे संविधान के बुनियादी सिद्धान्तों को छोड़ना ही होगा। प्राचीन भारत में धर्म ही सदा प्रशासन का आधार रहा है। यदि ज्ञानशून्य और भूखी जनता की इच्छा को ही यहां प्रशासन का आधार बनाया जाता है तो इसका मतलब यह होगा कि भारतीय समाज की सभी ऊंची और अच्छी बातों का सर्वथा लोप हो जायेगा। साधारण जनता अपनी कोई मरज़ी नहीं रखती है। वह तो तात्कालिक आवेश के वशीभूत हो चलती है और परिस्थितियों और परम्पराओं का दास होती है। दुनिया के किसी भाग में भी जनता की मरज़ी को आधुनिक प्रशासन का आधार मानकर नहीं चला जा सकता है। खासकर के भारत वर्ष में तो ऐसा किया ही नहीं जा सकता है क्योंकि यहां जनता में अनेक कमियां हैं। धर्म की जो कल्पना है उसमें सभी ऊंची और अच्छी बातें आ जाती हैं जो संसदात्मक व्यवस्था में पाई जा सकती हैं। जो राज्य धर्म पर आधृत होगा वह आर्थिक वैषम्य को तथा सामाजिक अन्याय को कभी बरदाश्त नहीं कर सकता है। वह इस सिद्धान्त को भी नहीं स्वीकार कर सकता है कि जनता की मरज़ी ही प्रशासन का आधार है। जनता की इच्छा सदा मलिन, पाशविक और अविकसित होती है। लोकतंत्र की बुनियादी बातों से धर्म का कभी असामन्जस्य नहीं हो सकता है। लोकतंत्र का सार यही है कि लोगों में यह भावना हो कि जनमत के अनुसार सारा काम चले। लोकतंत्र का सार इसी बात में है कि जनता की वास्तविक इच्छा का पूरा ध्यान रखा जाये और प्रकट रूप से जो मत उसने व्यक्त किया हो उसे प्रधानता न दी जाये। उसका प्रकट-मत आवेश और पक्षपात से ओतप्रोत रहता है। उसमें प्रतिक्षण परिवर्तन हुआ करता है। वह आज कुछ और कल कुछ हो जायेगा। जनता प्रकट रूप से जो मत व्यक्त करती हैं उसमें मानव जीवन की वह सभी बातें रहती हैं जो अधम और मूर्खतापूर्ण हैं। उसे प्रशासन का आधार नहीं बनाया जा सकता है। इसके प्रतिकूल जनता के वास्तविक मत को बड़े-बड़े स्थानीय विचारकों ने पवित्र माना है। उसको प्रधानता देना संसार के बड़े बड़े विचारकों के उपदेशों से तथा नीति से सर्वथा संगत है।

संसदात्मक पद्धति के विरुद्ध मैं इस लिये हूं कि आज के युग में इस पद्धति का कोई भविष्य नहीं रह गया है। आज के उद्योग प्रधान समाज की जो जटिल एवं गहन समस्यायें हैं उन्हें जनसाधारण नहीं समझ सकता है। यह विशेषज्ञों का युग है।

यह संविधान भारत के लिये काफी उपयोगी हो सकता है अगर वह ऐंग्लो-अमरीकी गिरोह में शामिल हो जाये। पर मेरा यह मत है कि अगर भारत इंग्लैंड और अमरीका के दल में शामिल होने का फैसला करता है तो यह उसकी बड़ी भारी भूल होगी।

इस देश में भूखों मरने वाला जो विशाल जनसमुदाय है वह ऐसे किसी प्रशासन को बरदाश्त नहीं कर सकता है जो ऐंग्लो-अमरीकी शक्तियों में शामिल होना पसन्द करेगा। वाशिंगटन और मास्को के बीच मुझे एक को चुनना हो तो मैं तो मास्को को ही चुनूंगा न कि वाशिंगटन को। स्वातंत्र्य से अधिक प्रिय है मुझे साम्य।

विकेन्द्रीकरण का जो सिद्धान्त चला है उसके पीछे मूल बात यही है कि इस सिद्धान्त के प्रवर्तकों को राज्य पर सर्वथा अविश्वास था। बाकुनिन एवं प्रिंस क्रोपाटकिन का यह मत था कि राज्य एक बुरी चीज़ है, वह हिंसा पर आधृत होता है इसलिये मानव जीवन में जो कुछ भी ऊंची और अच्छी बातें हैं उनके प्रति राज्य का शत्रु भाव रहता है। उनका मत है कि सर्वोत्तम राज्य वही राज्य है जहां जनता पर कम से कम शासन होता हो। मैं माननीय सदस्यों से यह पूछना चाहता हूं कि क्या आप इस मत के आधार पर अपने राज्य का निर्माण करने के लिए तैयार हैं?

अराजकतावाद व्यक्ति को महत्व देता है न कि राज्य को। इसके अनुसार सारी शक्तियां व्यक्ति में निहित रहनी चाहिये। जब हम शक्तियों के विकेन्द्रीकरण की बात करते हैं तो उसमें हमारा मुख्य प्रयोजन यही रहता है कि सारी शक्तियों को केन्द्र से छीन कर उन्हें प्रान्तीय शासकों को सौंप दिया जाये। मेरा यह मत है कि अगर केन्द्र के अधिकारों को और छीना जाता है तो भारत सरकार की हैसियत वही रह जायेगी जो राष्ट्र संघ (League of Nations) को प्राप्त थी। जमाने की जो सामाजिक आवश्यकतायें हैं। उन्हें अगर आप पूरा करना चाहते हैं तो केन्द्र के हाथ में और अधिक अधिकार देने होंगे। विकेन्द्रीकरण का सिद्धान्त एकात्मक राज्य के सिद्धान्त से सर्वथा विपरीत है। आज जरूरत है एकात्मक राज्य की। यदि प्रान्तीयता और साम्प्रदायिकता रूपी विषवृक्ष का हमें विनाश करना है तो विकेन्द्रीकरण की बात हमें सोचनी भी नहीं चाहिये।

पूज्य महात्मा जी विकेन्द्रीकरण के बड़े समर्थक थे। विकेन्द्रीकरण का उनका जो सिद्धान्त था वह आधृत था राम-राज्य की कल्पना पर।

(इस स्थल पर अध्यक्ष ने घंटी बजाई)

विकेन्द्रीकरण तो केवल एक ऐसे समाज में ही किया जा सकता है जो सम्यक् रूपेण अहिंसात्मक हो और जिस में लोग हिंसा की प्रवृत्ति का सर्वथा दमन कर चुके हों। किन्तु जब तक संसार में युद्धोद्यत राष्ट्र रहेंगे हम विकेन्द्रीकरण की बात भी नहीं सोच सकते हैं। जब तक आर्थिक वैषम्य बना रहेगा विकेन्द्रीकरण का स्वप्न कभी पूरा नहीं हो सकता है। विकेन्द्रीकरण के सिद्धान्त को प्रयोग में लाते ही राज्य समाप्त हो जायेगा। जब तक संसार में सैनिकवाद रहेगा शक्तियों का विकेन्द्रीकरण असम्भव है।

[श्री ब्रजेश्वर प्रसाद]

(यहां अध्यक्ष ने फिर घंटी बजाई)

यदि अनुमति हो श्रीमान् तो मैं एक या दो मिनट में अपनी बात खत्म कर दूं।

***अध्यक्षः** नहीं, अच्छा होगा कि आप अपनी वक्तृता हमें दीजिए।

***श्री ब्रजेश्वर प्रसादः** तो इसे यहां पढ़ा हुआ मान लिया जायेगा श्रीमान्?

***अध्यक्षः** नहीं। आप अपनी वक्तृता यहां लाइये।

***श्री मुहम्मद ताहिर** (बिहारः मुस्लिम): जनाब सदर, कब्ल इसके कि मैं कुछ अर्ज करूं जनाब को तहे दिल से मुबारकबाद देता हूं कि आज़ाद हिन्दुस्तान का दस्तूर जनाब की सदारत में तकमील पाया और क्यों न होता यह एक तड़प थी, दिल की आवाज़ थी जो बिहार की ज़मीन से उठी और बिहार ही ने उसको मुकम्मल कर दिया।

अब जहां तक दस्तूर का ताल्लुक है मैं अपने नाचीज़ ख्यालात का इज़हार करना चाहता हूं और मैं कोशिश करूंगा कि इसके दोनों पहलू अच्छाई और बुराई को मुख्तसर अलफ़ाज़ में मैंने जो समझा है और मुझ को यह दस्तूर बतला रहा है आपके सामने पेश कर दूं। अच्छाई इसलिये पेश करूंगा कि दुनिया वाले इससे सबक हासिल करेंगे और बुराई इसलिये बयान करूंगा ताकि आइन्दा कांग्रेस या कोई जमात बरसरे अख्तयार आई जो इन बुराइयों को बुराई महसूस करे तो मुमकिन है वह इसका इलाज भी करने की कोशिश करे।

इसके अच्छाई का पहलू ऐडमिनिस्ट्रेशन है। हमारा दस्तूर एक बेहतरीन ऐडमिनिस्ट्रेशन को दुनिया के सामने पेश करता है और मुझे उम्मीद है कि इस पर कराबन्द हो कर अगर हमारे मुल्क के कारकुनान ईमानदारी के साथ अमल करें तो यकीन कामिल है कि थोड़े दिनों में हमारा मुल्क कहीं से कहीं पहुंच जायेगा और दुनियां हमारे मुल्क पर नाज़ करेगी।

जहां तक इसके बुराई का सवाल है मुझे अफसोस है कि हमारे दोस्तों को मुमकिन है बुरा मालूम हो तो मैं माफी चाहता हूं और मुझे उम्मीद है कि वह मुझ को सुनने की कोशिश फरमायेंगे। इस की बुराई इसकी पालिसी में है। हमारा दस्तूर दुनिया के सामने एक बदतरीन पालिसी का सुबूत पेश करता है इस लिये कि हमारे दस्तूर को एक आइना होना चाहिये था कि अगर दुनिया का कोई आदमी उसे उठाकर देखता तो उसको इस मुल्क की सही और साफ शक्ल नज़र आती। मगर वह देख सकता है तो सिर्फ यह कि इस मुल्क में क्रिश्चियन-ऐंग्लो-इंडियन-ट्राइबल्स-हिन्दू शिड्यूल्ड कास्ट्स और हिन्दू वगैरह वगैरह तो बसते हैं और अगर इससे कोई पूछे कि भई इस मुल्क में सिख बसते हैं तो वह जवाब देगा कि नहीं। अगर पूछे मुसलमान बसते हैं तो जवाब देगा कि नहीं। यह महज़ दस्तूर की तंग नज़र पालिसी की वजह से है। मुसलमान जो एक मुस्तकिल अकलियत की हैसियत रखता है इसके आम स्यासी और कल्चरल हुकूक को पामाल कर दिया गया है। गोया मुसलमानों का बहैसियत मुसलमान के स्यासत में कोई वजूद दस्तूर में बाकी नहीं रहा। जो लोग यह कहा करते थे कि हिन्दुस्तान की अकसरियत

मुसलमान की स्यासत, कल्चर, जबान वगैरह को बरबाद कर देगी उसका मुकम्मल सुबूत इस दस्तूर में मौजूद है कि मुसलमानों की न स्यासत रही न कल्चर रहा और न जबान ही रही। हालांकि दीगर अकलियतों के लिये दस्तूर में सब चीज़ें मौजूद हैं। इसी तरह सिखों की स्यासी हुकूक का भी खात्मा किया गया। अब दुनिया इसका फैसला करेगी कि आज़ाद हिन्दुस्तान का यही फर्ज़ था जो उसने अपने दस्तूर में अदा किया। बहर कैफ दस्तूर जिस शक्ल में है मुझे शिकायत नहीं, जो कुछ बुराई थी उसको मैंने बयान कर दिया। अगर मुसलमानों के साथ दस्तूर में बेइन्साफी की गई है या इनको सज़ा दी गई तो इस से मुसलमानों का पोज़ीशन और अच्छा हो जाता है इसलिये कि इस कमी की वजह से हिन्दुस्तान की हुकूमत और अवाम की जिम्मेदारी मुसलमानों की तरफ और ज़्यादा हो जाती है। अगर ईमानदारी के साथ इस ज़िम्मेदारी को महसूस किया गया तो मुसलमान कभी घाटे में नहीं रहेगा। इस सिलसिले में एक बात जनाब की खिदमत में अर्ज करूंगा वह यह कि 26 जनवरी के बाद हिन्दुस्तान का मुसलमान एक तहरीक में हरकत देगा और वह बहुत हल्का होगा और उसका वफद आज़ाद हिन्दुस्तान के प्रेसीडेंट के पास हाजिर होगा और यह आखिरी इम्तहान होगा कि वाकई हिन्दुस्तान में मुसलमानों को कुछ मराआत इनायत किये जा सकते हैं या नहीं।

आखिर मैं एक बात अर्ज़ करना चाहता हूं कि यह निहायत शर्म की बात है कि हमारा दस्तूर हमारे मुल्क के नाम तऐयुन न कर सका। जनाब डॉक्टर अम्बेडकर की ज़हानत का सुबूत है कि जिन्होंने एक खिचड़ीनुमा नाम तजवीज़ फरमा कर मंजूर करा दिया। भला डॉक्टर साहब से कोई पूछे कि जनाब का दौलत खाना किस मुल्क में है तो इसका जवाब वह फखरियह दे सकते थे कि मैं भारत का रहने वाला हूं या यूं कहते कि इंडिया या हिन्दुस्तान का रहने वाला हूं। मगर अब तो जनाब डॉक्टर साहब को जवाब देना होगा कि मैं इंडिया दैट इज़ भारत का रहने वाला हूं। जब जनाब वाला खुद ही मुलाहज़ा फरमायें कि कितना बेहतर और खुशनुमा जवाब हुआ। आखिर में जनाब और मैम्बरान से अर्ज़ करूंगा कि अगर मेरे इज़हार ख्यालात से कोई तकलीफ पहुंची हो तो मुझे माफ फरमायें।

***श्रीमती पूर्णिमा बैनर्जी:** (संयुक्त प्रान्त: जनरल): अध्यक्ष महोदय, यद्यपि यह पुनरुक्ति की ही बात होगी पर अपने पूर्ववक्ता साथियों का अनुगमन करते हुए मैं भी यहां शुरू में मसौदा समिति को, आपको तथा अन्य लोगों को, जिन्होंने संविधान निर्माण के काम में हर समय यहां इतना महत्वपूर्ण और आवश्यक भाग लिया है, धन्यवाद प्रदान करती हूं। इस सम्बन्ध में मैं कोई ऐसा विभेद बरतना नहीं चाहती हूं जिससे किसी को ईर्ष्या हो और मुझ पर दोषारोप किया जाये फिर भी पिछली पंक्तियों में बैठने वाले सदस्यों की ओर से मैं आपको विशेष रूप से धन्यवाद दूंगी क्योंकि जब भी हमें यहां किसी अनुच्छेद या खंड के सम्बन्ध में कोई गलत या सही शक हुआ है तो आपने हमेशा हमारे लिये मसौदा समिति पर अपना प्रभाव डाल कर उसे स्पष्ट करा दिया है।

संविधान देश के लिए एक बहत ही महत्वपूर्ण और मूल्यवान लेख्य होता है क्योंकि उससे हमें इस बात का आभास मिलता है कि देशवासी किस तरह की शासन व्यवस्था रखना चाहते हैं, किस तरह का जीवन चाहते हैं, किस तरह से

[श्रीमती पूर्णिमा बैनर्जी]

अपनी शासन व्यवस्था चलाना चाहते हैं और भविष्य में किन आकांक्षाओं की वह पूर्ति करना चाहते हैं। वर्तमान संविधान पर विचार करते समय बेवश हमारा ध्यान अतीत की ओर चला जाता है और वह सारी मंजिलें हमें याद आती हैं जिनसे हो कर हम गुजर चुके हैं, हमें अपनी राजनैतिक परीधनता का वह निकटवर्ती अतीत याद आता है जब हमसे यह कहा जाता था कि तुम लोग एक राष्ट्र ही कहां हो? तुम लोग तो परस्पर विरोधी अनेक दलों में बंटे हो, तुम्हारे यहां जो स्थिति है उसमें लोकतंत्रीय व्यवस्था उपयुक्त नहीं हो सकती है—इत्यादि इत्यादि। बड़े बड़े सहानुभूतिपूर्ण और दिखावटी तौर पर उदार शब्दों द्वारा हमें यह कहा जाता था कि शासन का लक्ष्य यही है कि देश वासियों को प्रशासन में शामिल होने का अधिकाधिक अवसर दिया ताकि धीरे धीरे यहां उत्तरदायित्व स्वराज्य की व्यवस्था स्थपित कर दी जाये। एक समय ऐसा था कि जब भी शासक हमें कोई अधिकार देते थे तो तत्सम्बन्धी लेख्य में इन शब्दों का प्रयोग करते थे:—"हमारी प्रजा का चाहे वह किसी जाति, धर्म या रंग की हो सरकारी नौकरियों में बिना किसी पक्षपात के स्थान दिया जायेगा।" या "यहां के किसी 'नेटिव' के लिए अब भविष्य में जन्म, वंश या रंग के आधार पर नौकरी में प्रविष्ट होने पर कोई रुकावट न लागू ही जायेगी" "हम देशी रजवाड़ों के अधिकारों का, उनकी प्रतिष्ठा और सम्मान का हम आदर करेंगे।" इत्यादि, इत्यादि। इन पदसंहतियों से यह पता चल जाता है कि देश के भविष्य के बारे में हमारे भाग्य विधाताओं की धारणा क्या थी। हम लोगों ने अधीर होकर इन बातों से मुह मोड़ लिया और स्वाधीनता की प्रतिज्ञा ग्रहण की जो इतिहास में सदा अंकित रहेगी। हमने यह प्रतिज्ञा ग्रहण की:—"हमारा यह विश्वास है कि भारतवासियों को स्वाधीनता और स्वतंत्रता पाने का जन्म सिद्ध अधिकार प्राप्त है।" इस प्रतिज्ञा के साथ हमने एक नये पथ का अवलम्बन किया और देश की स्वतंत्रता के लिये जी जान से काम किया। इसी का फल है कि आज इस संविधान में हमें 'समता, स्वातंत्र्य और बन्धुत्व' शब्द मिल रहे हैं। ये शब्द इतिहास प्रसिद्ध शब्द हैं और दुनिया के अन्य भागों में भी इनका नारा उठाया गया है और हमेशा इनका नारा उठता रहेगा जब तक कि संसार में समता, बन्धुत्व और स्वतंत्रता स्थापित न हो जायेंगे। उन दिनों के अपने माप-दण्ड से जब हम वर्तमान को आंकते हैं तो यह मालूम पड़ता है कि भले ही हम अपने लक्ष्य की पूर्ण प्राप्ति तक न पहुंच पाये हों पर हमने प्रगति अवश्य की है। और जहां तक कि आम समाज की तात्कालिक आवश्यकताओं का सम्बन्ध है, संविधान में उसकी पूर्ति की व्यवस्था अवश्य कर दी गई है। अब हमसे कोई यह नहीं कह सकता कि हमारा देश एक राष्ट्र नहीं है और हम अभी स्वराज्य को नहीं चला सकते हैं।

यहां सभा में गत कई दिनों से जो बहस चल रही है उससे, मैं ऐसा अनुभव करती हूं कि यह बात अच्छी तरह सिद्ध हो जाती है कि संविधान का स्वागत सब लोगों ने एक भाव से नहीं किया है। यह संविधान ही ऐसा है कि इस पर लोगों की भिन्न भिन्न रायें होंगी। फिर भी संविधान में खास बुनियादी बात यह मानी गई है कि यहां की शासन व्यवस्था लोकतंत्रीय होगी और सभी देशवासियों की राष्ट्रीयता एक होगी। अपने संविधान में यह कहा गया है कि चाहे हम देश के किसी भी भाग में बसते हों पर हम सभी एक ही मातृभूमि के सन्तान हैं,

देश की महत्ता के लिए, हम चाहे जहां भी होंगे, मिल कर काम करेंगे, जाति, धर्म, रंग और प्रान्त के आधार पर कोई भेद नहीं बरता जायेगा। विघटन की प्रवृत्तियों को हम यहां अनेकता न लाने देंगे तथा हर वयस्क नागरिक जो अभ्यर्थी के लिये रखी गई अल्पतम अर्हताओं को पूरा करता है, वह देश के परमोच्च पद पाने की अभिलाषा कर सकता है। इस लिये कम से कम हमने एक मंजिल तो पूरी ही कर ली है और ऐसी स्थिति में पहुंच गये हैं जहां हम यह महसूस नहीं करते हैं देश के विशिष्टतम व्यक्ति को अब किसी विदेशी शासक के सामने सर झुकाने की नौबत आयेगी।

फिर भी श्रीमान, मैं यह जरूर समझती हूं कि चूंकि स्थिति में बड़ा भारी परिवर्तन हो गया है इसलिये संविधान के इन उपबंधों द्वारा समाज की अल्पतम आवश्यकताओं की ही पूर्ति हो पाती है। स्वातंत्र्य आन्दोलन के जमाने में हम खुद यह कहते थे कि हम जो लड़ाई लड़ रहे हैं वह पद से प्राप्त होने वाली तुच्छ सुविधाओं के लिए नहीं बल्कि इसलिये कि राजनीतिक शक्ति हमारे हाथ में आ जाये ताकि सारी सामाजिक व्यवस्था को बदल कर उसका इस तरह से पुनर्निमार्ण करें कि जनता की यह जानमारू गरीबी दूर हो जाये, उसका जीवन स्तर समुन्नत हो जाये और हम देश में एक ऐसे समाज का निर्माण कर सकें जहां सभी समान हों। इस लक्ष्य की कसौटी पर संविधान को कसने पर मैं यह महसूस करती हूं कि संविधान में इसकी व्यवस्था जरूर कर दी गई है कि स्थिति में आवश्यक परिवर्तन किया जा सके। निदेशक सिद्धान्तों में ऐसे उपबंध रखे गये हैं जिनके द्वारा देश की स्थिति में अपेक्षित परिवर्तन किया जा सकता है। सारहीन लोकतंत्र की व्यवस्था कर देने से ही अर्थात् मतदान के अधिकार की व्यवस्था कर देने से, सरकार बनाने के अधिकार की और उसे बदलने के अधिकार की व्यवस्था करके ही हम सन्तुष्ट नहीं हो गये हैं। ये अधिकार महत्वपूर्ण अवश्य हैं पर मैं यह समझती हूं कि जिन मूलाधिकारों को हमने संविधान में रखा है, लोकतंत्रीय व्यवस्था को क्रियान्वित करने के लिये उनका संविधान में होना बहुत जरूरी है। अगर हम एक ऐसे लोकतंत्र की स्थापना करना चाहते हैं जो हमारे आज के विकासशील समाज की आवश्यकताओं को पूरा कर सकता हो तो हमें वह साधन जनता के हाथ में देने होंगे जिनके द्वारा शासन की स्थापना की जा सकती हो। इसके लिये यह जरूरी है कि जनता को संघ बनाने की अभिव्यक्ति स्वातंत्र्य का अधिकार प्राप्त रहे जिसका प्रयोग करके वह शासन में परिवर्तन कर सकें। मैं यह जरूर महसूस करती हूं, श्रीमान, कि इन मूलाधिकारों पर प्रतिबंध लगाने वाले जो खंड रखे गये हैं उनको संविधान में नहीं रखना चाहिये था ताकि शान्तिपूर्ण उपायों द्वारा जनता देश के शासन को अपने हितार्थ बदल सकती।

राज्य की नीति के निदेशक सिद्धान्तों में हमने यह कहा है कि यद्यपि न्यायालय में अपील करके इन सिद्धान्तों पर अमल नहीं कराया जा सकता है पर देश के शासन के लिये इनका भी वही महत्व है जो मूलाधिकारों का है। फिर अनुच्छेद 38 और 39 की देश की आर्थिक नीति पर इस तरह अमल किया जायेगा कि जिससे सारे देशवासियों का कल्याण हो। इस सम्बन्ध में अनुच्छेद 39 में जो शब्द रखे गये हैं वह यह हैं:—

"समुदाय की भौतिक सम्पत्ति का स्वामित्व और नियंत्रण इस प्रकार बंटा हो जिससे सामूहिक हित का सर्वोत्तम रूप से साधन हो, तथा आर्थिक व्यवस्था

[श्रीमती पूर्णिमा बैनर्जी]

इस प्रकार चले कि जिससे धन और उत्पादन साधनों का सर्वसाधारण के लिये अहितकारी केन्द्रण न हो।"

यह सच है कि न्यायालय द्वारा शासन से हम इन महत्वपूर्ण सिद्धान्तों पर अमल नहीं करा सकते हैं फिर भी देश के शासन के लिये ये सिद्धान्त मूलाधिकारों के समान ही महत्व रखते हैं ओर भावी शासनों को इन सिद्धान्तों को ध्यान में रखना होगा। निजी तौर पर मैं यह महसूस करती हूं कि इन खंडों को संविधान में रखकर हमने सामाजिक व्यवस्था में परिवर्तन लाने का प्रबंध अवश्य कर दिया है। हमें स्थापना करनी है एक वास्तविक सम्पूर्ण प्रभुत्व सम्पन्न लोकतंत्रात्मक गणराज्य की— ऐसे गणराज्य की नहीं जिसमें मत देने का और कानून बनाने का थोथा अधिकार ही जनता को प्राप्त हो, जो केवल नाम के लिए लोकतंत्रात्मक बना रहता हो और स्वैरतंत्र अर्थात् हस्तक्षेप न करने की नीति पर चलता हो बल्कि ऐसे गणराज्य की जो इस उपयोगी सिद्धान्त पर चलता हो कि सर्वोत्तम शासन वही है जो कम से कम शासन करता हो, जो इस सिद्धान्त पर चलता हो कि नागरिकों को सक्रिय होने का प्रोत्साहन देना शासन का कर्तव्य है। हम ऐसे लोकतंत्रात्मक गणराज्य की स्थापना कर सकेंगे या नहीं यह निर्भर करता है हम पर। जिन दो अनुच्छेदों का ऊपर मैंने उद्धरण दिया है वह संविधान के महत्वपूर्ण अनुच्छेद हैं। अगर हम यह चाहते हैं कि जनता शान्तिपूर्वक कहीं समवेत हो सके और उसको हिंसा का सहारा न लेना पड़े तो उन्हें समवेत होने और सभा करने का पूरा अधिकार देना होगा।

मेरा यह मत अवश्य है कि सम्मेलन का और संघ बनाने का जो अधिकार दिया गया है, उन पर किसी भी परन्तुक द्वारा किसी तरह का कोई प्रतिबंध नहीं लगाना चाहिये था। इस सम्बन्ध में मुझे यह प्रेरणा प्राप्त हुई है अमेरिकन संविधान से जहां मूलाधिकारों को स्पष्ट शब्दों में रखा गया है और प्रतिबंध की बात केवल यह कही गई है कि ये अधिकार संसद निर्मित विधियों के अधीन प्रयुक्त होंगे। मैं इस सनकी सिद्धान्त को नहीं मानती कि सभी अधिकार सर्वथा परमाधिकार होते हैं। अधिकारों के लिये स्थिति विशेष अपेक्षित होती है और उस स्थिति विशेष में ही कोई अधिकार को अमल में ला सकता है। फिर भी जब अधिकारों को संविधान में रखना हो तो मेरा ख्याल यही है कि वहां यह प्रतिबंध न रख देना चाहिये कि अमुक सूरत में ही ये अधिकार प्रयोक्तव्य हो सकते हैं। मूलाधिकारों के बारे में अगर संविधान में प्रतिबंध मूलक उपबंध न रखे गये होते तो मनोवैज्ञानिक दृष्टि से स्थिति में एक बड़ा अन्तर यह आ जाता है कि जरूरत न रहने पर मूलाधिकारों पर प्रतिबंध आरोपित करने वाली विधियों का निरसन कर दिया जाता। किन्तु संविधान में इनको लिपिबद्ध कर देने से यह बात नहीं हो सकती है। अभी लोग यह शिकायत करते हैं कि यह एक वृहत् संविधान है और इसमें बहुत सी बातें लिपिबद्ध कर दी गई हैं। जितनी ही बातें संविधान में लिपिबद्ध की जायेंगी संविधान उतना ही कम लचीला हो जायेगा और उस की कठोरता बढ़ जायेगी। इन सब बातों को देखते हुए मैं यही महसूस करती हूं कि मूलाधिकारों में स्वातंत्र्य के सम्बन्ध में जो प्रतिबंध मूलक खण्ड रखे गये हैं उनका न रखना ही अच्छा होता।

अनुच्छेद 21 दैहिक स्वातंत्र्य की प्रत्याभूति देता है और अनुच्छेद 28 निवारक निरोध का उपबंध करता है। अनुच्छेद 21 में व्यक्ति के सुरक्षा की उसके मकान और वैयक्तिक सम्पत्ति की तलाशी न लिये जाने की और जब्त न किये जाने की व्यवस्था भी अगर रखी गई होती तो मेरी समझ से ज्यादा अच्छा होता क्योंकि हमारा राजनीतिक इतिहास बतलाता है कि सरकार को तलाशी और निवारक निरोध का जो अधिकार प्राप्त रहा है उसने जनता पर गज़ब ढाह दिया है और हम कभी यह न चाहेंगे कि उन अधिकारों के कारण भविष्य में यहां के किसी उपयोगी राजनीतिक आन्दोलन की प्रगति में बाधा उत्पन्न हो।

राज्य की नीति के निदेशक सिद्धान्तों वाले अध्याय में अनुच्छेद 39 में हमने यह अवश्य कहा है कि अपनी सामाजिक व्यवस्था में हम इस प्रकार परिवर्तन कर सकते हैं जिससे सामूहिक हित का सर्वोत्तम रूप से साधन हो, पर उसमें यह नहीं कहा गया है कि आवश्यकता होने पर सामूहिक हित के लिए राज्य किसी उद्योग धंधे को अपने अधिकार में ले सकता है। कांग्रेस के कराची वाले अधिवेशन में जो प्रस्ताव पास किया गया था उसमें पहली बार इन मूलाधिकारों की बात कही गई थी और उसमें यह भी कहा गया था कि देश के मुख्य मुख्य उद्योग धंधे राज्य के नियंत्रणाधीन रहेंगे। निदेशक सिद्धान्तों में इस बात को ही हमें स्थान देना चाहिये था। यदि विदेशी प्रभाव को रोकने के लिए शासन को अधिकार देना आप आवश्यक समझते हैं तो मैं यह जरूर कहूंगी कि देश के प्रमुख उद्योगों और खनिजों को राज्य को अपने हाथ में ले लेना चाहिये था और प्रतिकर का जो उपबंध रखा गया है इससे राज्य को इस सम्बन्ध में विमुक्त कर देना चाहिये था।

दूसरी बात मैं नमक के बारे में कहना चाहती हूं और मेरा ख्याल है कि मैं जो कुछ कहने जा रही हूं वही राय इस बारे में यहां अधिकांश मित्रों की है। इस देश में नमक के पीछे एक बड़ा इतिहास है जो हमारे लिये उतना ही महत्व रखता है जितना अमेरिका वालों के लिए बोस्टन चाय का इतिहास। यह तो मैं समझती हूं कि शासन नमक पर कर लगाने का कोई इरादा नहीं रखता है पर मैं ऐसा महसूस करती हूं कि स्वातंत्र्योपलक्ष्य में देशवासियों को नमक कर से सर्वथा विमुक्त कर देना चाहिये था और संविधान में यह उपबंध रख देना चाहिये था कि भारत में बने नमक पर कोई कर नहीं लगेगा। कराची वाले कांग्रेस अधिवेशन में जो प्रस्ताव पास हुआ था उसमें नमक को करमुक्त रखने की बात भी कही गई है।

प्रस्तावना में "पूर्ण स्वराज्य" शब्दों का न होना मुझे बहुत खटक रहा है। ये शब्द हम लोगों को बहुत प्रिय रहे हैं इसलिये इनको प्रस्तावना में स्थान मिलना ही चाहिये था। मैं यह चाहती हूं कि मसौदा समिति ने प्रस्तावना में ये शब्द रखे होते:—

"हम भारत के लोग पूर्ण स्वराज्य प्राप्त कर लेने पर अब राष्ट्र को एक लोकतंत्रात्मक गणराज्य बनाते हैं"

मेरी समझ से इन शब्दों का रखना एक अच्छी बात होती।

एक दूसरी बात मैं कहना चाहती हूं सेवाओं के सम्बन्ध में। इस विषय पर और लोगों ने भी बहुत कुछ कहा है। निजी तौर पर मैं यही समझती हूं कि

[श्रीमती पूर्णिमा बैनर्जी]

संविधान में चन्द ऊंची नौकरियों के स्थायित्व का उपबंध रखकर के विभेद नहीं बरतना चाहिये था। नौकरियों में स्थायित्व का होना उपयोगी जरूर है पर इसके लिए संविधान में उपबंध रखने की मेरी समझ से ज़रूरत नहीं थी। 'सर्विस मैनुअल' नामक पुस्तिका में भरती और बरखास्तगी के बारे में ये नियम दिये हुए हैं और इन्हीं नियमों के अधीन सरकारी नौकर नियंत्रित रहते हैं। अगर ये नियम देश के बहुसंख्यक सरकारी नौकरियों के लिए ठीक हैं तो फिर चन्द ऊंची नौकरियों के लिए भी ये पर्याप्त समझे जाने चाहियें।

आपकी अनुमति हो श्रीमान, तो, मैं एक और बात भी कह देना चाहता हूं। इस संविधान में स्त्रियों का भी उल्लेख आया है। मैं यहां अपने सार्थियों से और खास करके रोहिणी बाबू से यह कहना चाहूंगी कि उन्हें इस मसले पर गम्भीरता के साथ ही विचार करना चाहिये। हमें यह समझना चाहिये कि भारत के शेष नागरिकों की तरह यहां का स्त्री समुदाय भी अब जीवन के एक नवद्वार पर खड़ा है। पर्दा के जाल से निकल कर स्त्री समाज अब एक नये जीवन में आ गया है जहां उसके व्यक्तित्व को विकास मिलेगा। उसे अपने घर में और देश में एक नया स्थान मिल रहा है जो काफी दायित्वपूर्ण और कठिन है। गृहस्थी के कामों में उसे सहधर्मिणी बताया गया है और गृहस्थी-निर्माण के काम में उसकी जो देन है वह अब राष्ट्रीय महत्व के कार्यों तक जानी चाहिये। राष्ट्रीय कार्यों में भी उसे वही महत्वपूर्ण स्थान मिलना चाहिए जो गृहस्थी निर्माण के काम में उसे प्राप्त है। पुरुषों के बराबर की वह साझीदार है और उनकी सहायक साथी है। राष्ट्र निर्माण के लिए उन्हें भी बहुत कुछ करना है। अभी स्त्रियों को यह स्थिति नहीं प्राप्त हो पाई है कि पुरुषों के समान राष्ट्र निर्माण के काम में वह भी योगदान दें। इसलिये माननीय मित्र भी रोहिणी कुमार चौधरी तथा अन्य उपस्थित मित्रों से यह अनुरोध करूंगी कि वह इस समस्या पर यथाशक्य गम्भीरता के साथ विचार करें और उसके समाधान में भरसक सहायता और सहयोग दें। स्वातंत्र्य प्राप्ति के लिये जो संग्राम चला है उसमें स्त्रियां पीछे नहीं रही हैं और मुझे विश्वास है कि नवप्राप्त स्वतंत्रता को सुरक्षित रखने में भी वह पीछे न रहेंगी।

इन शब्दों के साथ मैं अपनी वक्तृता समाप्त करती हूं और उपसंहार में उन शब्दों को दुहराना चाहती हूं जिन्हें 14 अगस्त को प्रस्ताव उपस्थित करते हुए पंडित जवाहर लाल नेहरू ने भाषण में प्रयुक्त किया था। उन्होंने कहा था कि युग के सर्वश्रेष्ठ पुरुष की आकांक्षा यही थी कि हर दुखिया के आंसू को हम पोंछ दें। हो सकता है कि हममें से सबको इतना सामर्थ्य न प्राप्त हो कि युग के महा मानव की इस आकांक्षा को पूरा कर सकें पर जब तक जनता की गरीबी नहीं दूर हो जाती है और उनकी तकलीफें बनी रहती हैं तब तक देश की सेवा हम करते रहेंगे यही प्रतिज्ञा हमें करनी चाहिये। आशा करती हूं जो थोड़ी मुद्दत हमें इस काम के लिये मिली है उसमें हम सभी साथी और दोस्त देश की महत्ता के लिए कंधे से कंधा मिलाकर खूब मेहनत से काम करेंगे।

***श्री वी.एस. सर्वटे** (मध्य भारत): अध्यक्ष महोदय, इस बात को सभी स्वीकार करेंगे कि अपने इस संविधान की सबसे बड़ी खूबी यह है कि भारत सीमा के

अन्तर्गत अवस्थित सभी देशी राज्यों पर भी यह उसी तरह लागू होगा जिस तरह कि प्रान्त कहे जाने वाले राज्यों पर। यह संविधान की सर्वोत्कृष्ट सफलता है जो भारतीय इतिहास में एक अपूर्व बात है और इसके लिये समस्त राष्ट्र को सरदार पटेल का ऋणी होना चाहिये। पर साथ ही हमें उन लोगों को भी न भूलना चाहिये जिनकी भी इस साफल्य प्राप्ति में बड़ी देन रही है। यहां मेरा संकेत है देशी राज्यों की जनता की ओर। यह सभा शेख अब्दुल्ला के त्यागों से और उनकी सेवाओं से अच्छी तरह परिचित है पर अन्य देशी राज्यों में शेख अब्दुल्ला सरीखे अनेक त्यागी व्यक्ति रहे हैं कि जिनकी इस सभा के अनेक सदस्यों को शायद कोई जानकारी नहीं है। ऐसे त्यागी व्यक्ति, ट्रावनकोर, मैसूर, बड़ौदा, कोचीन, सौराष्ट्र, मध्यभारत की रियासतों में रहे हैं। राजस्थान में तथा उत्तर में सिख राज्यों में और पूर्व में उड़ीसा के राज्यों तक में भी ऐसे त्यागी व्यक्ति रहे हैं। इन लोगों ने अपने अपने राज्यों में प्रजा मण्डल का खूब सुदृढ़ संगठन काम कर रखा था और उत्तरदायी शासन की इनकी मांग को वहां के शासक ब्रिटिश शक्ति की सहायता पाकर भी दबा न सके। अपनी उदारता दिखाने के लिये भले ही हम यह कहें कि भारत सरकार ने जब इन नरेशों के सामने प्रसंविदा या प्रवेश-लिखत रखे तो इन्होंने आत्म-त्याग की भावना से उसे स्वीकार कर लिया। किन्तु ऐतिहासिक दृष्टि से यह सत्य नहीं है। वहां की जनता ने उत्तरदायी शासन पाने के लिए जो घोर प्रयास किया था उसे वहां के नरेश अच्छी तरह समझते थे और यह अच्छी तरह जानते थे कि प्रसंविदा या प्रवेश-लिखत को मानने के सिवा उनके पास और कोई चारा नहीं है। वह इस बात को अच्छी तरह जानते थे कि अगर उन्होंने उसे स्वीकार नहीं किया तो जनता उनको और भी बदतर हालत में रखेगी। इस लिये स्थिति से विवश होकर ही उन्होंने प्रसंविदा या प्रवेश-लिखत को स्वीकार किया था। इसलिए, मुझे विश्वास है कि देशी राज्यों की जनता के त्याग और सेवा को स्वीकार करने में, देश के एकीकरण के लिये राज्यों में संग्राम चलाकर जो कष्ट और कठिनाइयां उन्होंने झेली हैं उसे मानने में सभा कभी कोई अनिच्छा न दिखलायेगी।

जहां तक इस संविधान का सम्बन्ध है, मैं यह अवश्य कहूंगा कि प्रत्येक देशवासी को बड़ी खुशी होती अगर राजप्रमुख को राज्यपाल और राष्ट्रपति के स्तर पर न रखा होता। इस प्रसंग में मुझे संस्कृत के प्रसिद्ध वैयाकरण श्री पाणिनि पर किया गया एक कटाक्ष याद आ गया है। उन्होंने एक सूत्र में कहा है:—

श्वा युवाय द्योन:

उन्होंने एक समान नियम लागू किया है, कुत्ता, नवयुवक और भगवान इन्द्र, इन तीनों के लिए। इस संविधान के साथ भी कुछ ऐसी ही बात है। अनुच्छेद 361(2) को पढ़िये। उसमें कहा गया है कि:—

> "राष्ट्रपति के अथवा राज्य के राज्यपाल या राज्यप्रमुख के खिलाफ उसकी पदावधि में किसी भी प्रकार की दंड कार्यवाही किसी न्यायालय में संस्थित नहीं की जायेगी और न चालू रखी जायेगी।"

जहां तक राष्ट्रपति या राज्यपाल का सम्बन्ध है यह व्यवस्था ठीक है। किन्तु राजप्रमुख के लिये यही ठीक नहीं हो सकती है। उसका पद तो उसके जीवन काल तक बना रहेगा। इस व्यवस्था के अनुसार तो उसके विरुद्ध कभी कोई दंड

[श्री वी.एस. सर्वटे]

कार्यवाही ही नहीं चलाई जा सकती है। इस व्यवस्था से इससे भी विषम स्थिति पैदा हो सकती है। मान लीजिये राजप्रमुख ने खून कर दिया है ऐसी स्थिति के लिये संविधान में कोई व्यवस्था नहीं है।

श्री टी.टी. कृष्णमाचारी (मद्रास: जनरल): माननीय मित्र को मैं यह बताना चाहता हूं कि राजप्रमुख तभी तक अपने पद पर रहेगा जब तक राष्ट्रपति उसको रहने देंगे। यदि वह खून करता है तो राष्ट्रपति उसे पद से हटा देंगे।

***श्री वी.एस. सर्वटे:** मैं पुन: यह कहूंगा कि राजप्रमुख राष्ट्रपति के प्रसाद काल पर्यन्त नहीं अपना पद धारण करेगा। वह पद धारण करेगा उस प्रसंविदा के बल पर जिस पर दोनों पक्षों ने मान लिया है और जिसे अब रद्द नहीं किया जा सकता है।

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारी:** मैं कहूंगा कि माननीय मित्र को उस बारे में बिल्कुल गलत जानकारी मिली है।

***श्री वी.एस. सर्वटे:** अच्छी बात है। अगर मेरी जानकारी गलत है तो खुशी होगी। फिर भी.....

***पंडित ठाकुर दास भार्गव** (पूर्वी पंजाब: जनरल): अब संविधान को ही पूर्णाधिकार प्राप्त है और प्रसंविदा आदि को वह उलट सकता है।

***श्री वी.एस. सर्वटे:** मुझे अपना विचार व्यक्त करने दीजिये। मैं यही समझता हूं कि राष्ट्रपति या राज्यपाल अथवा राजप्रमुख की गिरफ्तारी या उनको कारावास में रखने के लिये उनकी पदावधि में किसी न्यायालय द्वारा कोई व्यवस्था नहीं निकाली जायेगी।

अब मैं आपका ध्यान आकृष्ट करूंगा अनुच्छेद 238 की ओर जिसमें यह कहा गया है कि भाग 6 के कतिपय उपबंध देशी राज्यों के सम्बन्ध में लागू न होंगे। इसमें यह कहा गया है कि भाग 6 के अनुच्छेद 155, 156 और 157 देशी राज्यों के बारे में लागू न होंगे। अनुच्छेद 155 में यह कहा गया है कि "राज्य के राज्यपाल को राष्ट्रपति अपने हस्ताक्षर और मुद्रा सहित अधिपत्र द्वारा नियुक्त करेगा।" अनुच्छेद 156 में यह कहा गया है कि "राष्ट्रपति के प्रसाद पर्यन्त राज्यपाल पद धारण करेगा।" पर अनुच्छेद 238 में यह स्पष्ट रूप से प्रावहित कर दिया गया है कि अनुच्छेद 156 देशी राज्यों के बारे में लागू न होगा। इस अनुच्छेद के द्वारा मेरे इस कथन का समर्थन हो जाता है राजप्रमुख के लिये यह जरूरी नहीं है कि वह राष्ट्रपति के प्रसाद काल पर्यन्त ही पद धारण करेगा। और आश्चर्य की बात यह है कि अनुच्छेद 157 भी देशी राज्यों के बारे में लागू नहीं होता है। इस अनुच्छेद में यह कहा गया है: "कोई व्यक्ति राज्यपाल नियुक्त होने का पात्र न होगा जब तक कि वह भारत का नागरिक न हो तथा 35 वर्ष की आयु पूरी न कर चुका हो।" यह अनुच्छेद राजप्रमुख के लिए लागू नहीं होता है। अपने संविधान के अनुसार इक्कीस वर्ष की आयु का व्यक्ति भी राजप्रमुख के कर्तव्यों का निर्वहन कर सकता है। प्रान्तों के बारे में यह कहा जाता है कि

देशी राज्यों की अपेक्षा वहां का प्रशासन अच्छा है और वहां की सरकार अच्छी है। प्रान्तों के लिये तो यह व्यवस्था रखी गई है कि राज्यपाल वही व्यक्ति बनाया जा सकता है जो पैंतीस वर्ष की आयु पूरी कर चुका हो पर देशी राज्यों के बारे में, जिनकी प्रशासन व्यवस्था प्रान्तों के मुकाबले में कम अच्छी बताई जाती है, यह रखा गया है पैंतीस वर्ष से कम आयु का व्यक्ति राजप्रमुख बनाया जा सकता है। राजप्रमुख के कर्त्तव्य भी वही होंगे जो राज्यपाल के हैं। प्रान्तों और देशी राज्यों के बारे में भिन्न भिन्न व्यवस्था का रखना एक असंगत बात ही है। जहां तक कि राजप्रमुख की आयु का सम्बन्ध है, अनुच्छेद 157 क्यों नहीं लागू किया जा रहा है यह मैं नहीं समझ पाता हूं। प्रसंविदाओं के बारे में कुछ कठिनाइयां हैं इसे मैं जानता हूं। प्रसंविदाओं में यह कहा गया है कि उनके राज्यों में उत्तराधिकार सम्बन्धी जो नियम हैं वही राजप्रमुख के बारे में लागू होंगे। उनमें यह भी कहा गया है कि देशी राज्यों के नरेश अपने जीवनकाल पर्यन्त राजप्रमुख पद पर रहेंगे। यदि अपने संविधानवेत्ता लोग कोई ऐसा उपाय निकालते जिससे राज्यपाल और राजप्रमुख के पद में कुछ अन्तर रहता तो मुझे खुशी होती और शायद सभी को खुशी होती। राजप्रमुख का पद तो नाम मात्र के लिये रखना चाहिये था और राज्यपाल पद के लिये नई व्यवस्था करनी चाहिये थी। अब यह सुझाव देने का समय नहीं रह गया है पर संविधान में यह कमी रह गई है और आगे चल कर संशोधन का समय आने पर हमें इसे दूर कर देना चाहिये।

एक या दो बातें और हैं जिनके बारे में कुछ कहना जरूरी है। वित्त आयोग की नियुक्ति के लिये एक अनुच्छेद रखा गया है—अनुच्छेद 280। इसके उपखण्ड (ग) में यह कहा गया है:—

> "अनुच्छेद 278 के खण्ड (1) के अधीन या अनुच्छेद 306 के अधीन भारत सरकार और प्रथम अनुसूची के भाग (ख) में उल्लिखित किसी राज्य की सरकार के बीच किये गये किसी करार के उपबंधों के चालू रखने अथवा रूपभेद करने के बारे में;"

यहां "अनुच्छेद 278 के खण्ड (1) के अधीन या अनुच्छेद 306 के अधीन।" शब्द द्वितीय पठन के बाद जोड़े गये हैं। मुझे इसका खेद है कि बीमार होने के कारण मैं इस पर अपना संशोधन नहीं भेज सका। सभा को या मसौदा समिति को या जो कोई भी संविधान निर्माण की जिम्मेदारी रखता हो, उसे इस बात पर विचार करना चाहिये कि भारत सरकार तथा देशी राज्यों के बीच वित्त-विषयक एकीकरण का जो भी मामला हो उन सब को वित्त-आयोग पर छोड़ना क्या ज़्यादा अच्छा और समस्त देश के लिए कल्याणकर न होगा। इसके लिए एक स्वतंत्र न्यायाधिकरण की व्यवस्था होनी चाहिये थी जो सभी बातों को ध्यान में रखते हुए इसके बारे में निर्णय देता। अभी जो स्थिति है वह यह है कि भारत सरकार ही इस बारे में अन्तिम निर्णय देगी जो वित्त विषयक एकीकरण के मामले में स्वयं एक पक्ष है। वित्तीय एकीकरण की व्यवस्था में भारत सरकार तथा देशी राज्य दोनों ही साझीदार हैं पर प्रमुख साझीदार है भारत सरकार और देशी राज्य उसके अधीनस्थ साझीदार हैं। इसलिए इस व्यवस्था से जो भी लाभ होगा वह अधिकतर भारत सरकार को भी प्राप्त होगा। सुतरां मेरा कहना यह है कि अच्छा यह होता कि वित्तीय एकीकरण के प्रश्न को वित्त आयोग पर छोड़ दिया गया होता। जिस खण्ड का

[श्री वी.एस. सर्वटे]

ऊपर मैंने ज़िक्र किया है वह द्वितीय पठन में नहीं रखा गया था, वह नया जोड़ा गया है। इसके अनुसार वित्त-आयोग कपितय करारों के सम्बन्ध में ही विचार कर सकता है। इस खण्ड के द्वारा आयोग का अधिकार सीमित हो जाता है। शायद इस नवीन खण्ड की ओर सभा का ध्यान नहीं जा पाया है। आदरणीय अध्यक्ष महोदय से तथा सम्बन्धित अधिकारियों से मैं सविनय यह अनुरोध करूंगा कि इस अंश पर वह पुनर्विचार करें और देखें कि इसमें ऐसा परिवर्तन किया जा सकता है क्या? जिससे भारत सरकार तथा देशी राज्यों के बीच उठने वाले वित्तीय एकीकरण के सभी प्रश्न वित्त आयोग को सौंपे जा सकें। यह एक महत्वपूर्ण प्रश्न है और विशेष कर के इसका महत्व और भी बढ़ जाता है इसलिये, जैसा कि कई पूर्व वक्ताओं ने कहा है कि कई राज्य अपनी आय का अर्थात् वहि-शुल्क और रेलवे की आमदनी का एक बड़ा अंश अब नहीं पा सकेंगे। ऐसी हालत में भारत सरकार के लिए यह शोभा की बात होगी कि राज्यों को जो घाटा होता हो उसको वह ध्यान में रखें और कम से कम निजी थैली की रकम का भार अपने ऊपर ले लें। देशी राज्यों के उठा दिये जाने से भारत सरकार को ही कुल मिलाकर अधिक लाभ पहुंचता है। देशी राज्यों को इस व्यवस्था से कम लाभ है। मुझे पक्का विश्वास है कि चन्द साल के बाद हर देशी राज्य में उत्तरदायी सरकारें अस्तित्व में आ जायेंगी। वहां उत्तरदायी शासन के लिये इतना प्रबल जनमत रहा है कि थोड़े ही दिनों में वहां नरेश के रूप में किसी का अस्तित्व न रह जाता और सम्भवत: नरेशों की स्थिति उससे भी बदतर हो जाती जो आज उनको प्राप्त है।

एक या दो मिनट में मैं अपनी बात खत्म कर दूंगा। मुझे केवल एक या दो बातों की और चर्चा करनी है। मैं यह कहना चाहता हूं कि कई राज्यों के बारे में ऐसा हुआ है कि निजी थैली की जो रकम प्रसंविदा के अनुसार अब तय हुई है वह उससे कहीं ज्यादा है जो नरेशों को पहले मिला करती थी। एक खास राज्य के बारे में मुझे मालूम है कि वहां राजा को पहले कम रकम मिलती थी पर अब प्रसंविदा के अनुसार निजी थैली के रूप में उसे ज्यादा रकम मिलेगी। यह व्यवस्था इस लिये की गई है कि समस्त देश के हित को देखते हुए एकीकरण के लिये ऐसा करना जरूरी था। इसलिए भारत सरकार के लिए उचित यही है और उसका यह कर्तव्य होना चाहिये कि निजी थैली की रकम का भार वह अपने ऊपर ले ले। अभी होता यह है कि भारत सरकार उस रकम को देती जरूर है पर बाद में राज्य से वह वूसल कर लेती है। ऐसा न होना चाहिये। भारत सरकार को यह रकम अपनी संचित निधि से देनी चाहिये।

बस एक और अनुच्छेद 295 का ही मुझे जिक्र करना रह गया है। शायद यह अनुच्छेद भी पहले नहीं था और द्वितीय पठन के बाद नया जोड़ा गया है। इस अनुच्छेद में यह कहा गया है कि संघ-सूची से सम्बन्ध रखने वाली सभी सम्पत्ति जो किसी राज्य में होगी उस पर पहले स्वामित्व रहेगा भारत सरकार का और बाद में चलकर उसके बारे में जो करार तय पाये उसके अनुसार उसका स्वामित्व राज्यों को हो सकता है। मैं यह समझता हूं कि व्यवस्था इससे ठीक उल्टी होनी चाहिये थी। सभी सम्पत्ति पर पहले तो राज्य का ही स्वामित्व माना जाना चाहिये था और बाद में करार के अनुसार उसका स्वामित्व भले ही भारत

सरकार को दिया जाता। जो भी हो, संघ-सूची से सम्बन्ध रखने वाली राज्य-सम्पत्ति पर स्वामित्व किसका हो इस प्रश्न का निर्णय भी वित्त-आयोग द्वारा ही होना चाहिये। इस मसले पर वित्त-आयोग को अनुसंधान करना चाहिये। अभी इस संबंध में जो करार तय हुए हैं वह वित्तीय सिद्धान्तों के आधार पर नहीं बल्कि हर राज्य की अपनी अलग-अलग परिस्थिति को ख्याल में रख कर।

अन्त में अब मुझे एक शब्द कहना है अनुच्छेद 371 के बारे में जिसमें यह कहा गया है कि राज्यों की सरकारें किसके साधारण नियंत्रण के अधीन होंगी। राज्य तो बहुत से हैं। मैं यह मानता हूं और हर आदमी को यह तथ्य मानना होगा कि ऐसे राज्य मैं जिन पर बाहरी नियंत्रण की ज़रूरत हो सकती है। पर ऐसे राज्य भी हैं जो प्रान्त नाम धारी राज्यों से किसी भी तरह कम दक्ष प्रशासन व्यवस्था नहीं रखते हैं। इस लिये यह व्यवस्था देशी राज्यों के लिए कलंक के समान ही है। सभी राज्यों को बाहरी नियंत्रण के अधीन रखने की जो व्यवस्था की गई है उससे हर स्वाभिमानी व्यक्ति को ठेस पहुंचेगी और वह यही महसूस करेगा कि सभी राज्यों को मानो आप नाबालिग समझ कर कोर्ट ऑफ वाड्स की अधीनता में रख रहे हैं। इसमें शक नहीं कि एक उपबंध इस सम्बन्ध में ऐसा रखा गया है जिससे कुछ धीरज हो जाता है। पर जब तक राज्य मंत्रालय (States Ministry) का नियंत्रण राज्यों पर रहता है, राज्यों के मंत्री अपने आन्तरिक मतभेदों को दूर करने के लिये कभी अपने विधान मंडलों की ओर न देखेंगे बल्कि राज्य मंत्रालय से सलाह लेने के लिये सीधे दिल्ली की ओर दौड़ेंगे। अपने निर्वाचन क्षेत्रों के मतदाताओं को प्रसन्न करने के बजाय वह राज्य मंत्रालय को खुश करने की कोशिश करेंगे। वर्तमान परिस्थिति में यह बात अनिवार्य है। पर यह बात न राज्यों के लिये लाभप्रद होगी और न भारत को ही इससे फायदा होगा इसलिये मैं भावी राष्ट्रपति से यह अपील करूंगा कि इस अनुच्छेद के परन्तुक पर पूरी उदारता के साथ अमल करें। परन्तुक यह है:– "परन्तु राष्ट्रपति आदेश द्वारा निदेश दे सकेगा कि इस अनुच्छेद के उपबन्ध उस आदेश में उल्लिखित किसी राज्य को लागू न होंगे" किसी को स्वावलम्बी बनाने के लिए सर्वोत्तम उपाय यह है कि आप उसको अपना सहारा न दीजिये। शुरू में वह जरूर लड़खड़ायेगा पर बाद में वह अवश्य सम्भल जायेगा। इस लिये राष्ट्रपति से मैं यह अपील करूंगा कि इस परन्तुक के अधीन जो अधिकार उसे दिया गया है उसका प्रयोग करके वह ऐसे राज्यों को इस अनुच्छेद के प्रभाव से विमुक्त कर दे जिसकी प्रशासन व्यवस्था इतनी अच्छी है कि उनको नियंत्रण मुक्त रखना उचित कहा जा सकता हो। इन शब्दों के साथ मैं इस संविधान का समर्थन करता हूं।

श्री बसन्त कुमार दास (पश्चिमी बंगाल: जनरल): अध्यक्ष महोदय, मुख्यत: तीन बातें हैं, जिन्होंने संविधान को प्रस्तुत रूप दिया है। इन्हीं को मैं संविधान का आधार मानता हूं और ये यह हैं:—

(1) वह अनुभव जो भारत-शासन अधिनियम 1935 को क्रियान्वित करने में हमें प्राप्त हुआ है।

[श्री बसन्त कुमार दास]

(2) स्वाधीनता प्राप्त जनता की आवश्यकतायें और आकांक्षायें।

(3) देश और विदेश में होने वाली घटनाओं का तथा अभी आगे कम से कम दस साल तक घटने वाली घटनाओं का आघात।

इसमें शक नहीं कि "पुलिस राज्य" को सुचारू रूप से चलाने के लिये भारत शासन अधिनियम 1935 एक सुन्दर व्यवस्था है और इसे बड़ी उपयुक्त कानूनी भाषा में लिपिबद्ध किया गया है जो जमाने की कसौटी पर खरा उतरा है। इसलिए, जहां तक प्रशासन विषयक बातों का सम्बन्ध है यह ठीक ही हुआ है कि संविधान में बहुत कुछ लिया गया है इसी अधिनियम से।

पर स्वाधीनता प्राप्ति के बाद अब अपना राज्य 'पुलिस राज्य' न रहकर 'जनता राज्य' हो गया है जिस में जनता के कल्याण को ध्यान में रखकर सारी व्यवस्था होनी चाहिए तथा देश में शान्ति और सुरक्षा बनाये रखने के साथ जनता के पूर्ण विकास का आश्वासन मिलना चाहिए। इसलिए इस अधिनियम की नकल से हमारा काम नहीं चलेगा और न ऐसा करना ठीक ही है। देश में "शान्ति रखना तथा जनता को विकसित करना" दोनों ही आवश्यक बातें हैं। इसक लिए एक ऐसा मार्ग निकालना होगा जिस पर चलकर इन दोनों में सन्तुलन बनाये रखा जा सके। किन्तु सन्तुलन मूलक मार्ग निकालने में बड़ी बाधा पड़ रही है इन कारणों से कि देश विभाजन के फलस्वरूप एक नई राजनीतिक स्थिति पैदा हो गई है, नवप्राप्त स्वाधीनता के साथ विघटन मूलक प्रवृत्तियां पैदा हो गई हैं और आज अपना देश और सारी दुनिया ही एक सांस्कृतिक और आदर्शिक संकट से होकर गुज़र रही है। इन सभी बातों में समन्वय स्थापित करने का समय बड़ा ही कठिन है जिसको पूरा करने में हमारे नेताओं की बुद्धिमत्ता की, उनके ज्ञान और अनुभव की कठोर परीक्षा हुई है। संविधान में एक तरफ तो हम यह देखते हैं कि केन्द्रीय शासन को अबाध अधिकार दिये गये हैं, उसे प्राय: डिक्टेटरी अधिकार दिये गये हैं ताकि देश में शान्ति और व्यवस्था बनी रह सके और विध्वंसात्मक शक्तियों का कठोरता के साथ दमन किया जा सके। दूसरी तरफ संविधान में मूलाधिकार तथा निदेशक सिद्धान्तों को, भी स्थान दिया गया है जिनको अगर सद्भावना के साथ सही सही ढंग पर अमल में लाया जाये तो जनता की आकांक्षाओं की पूर्ति में बड़ी सहायता मिल सकेगी। देश की जनता अधीरता के साथ उस दिन की प्रतीक्षा करती जा रही है जब विदेशी बन्धन से मुक्त होने पर वह अपने को सुखी और सम्पन्न देख पायेगी।

संविधान में रखे गये सिद्धान्तों से भी यदि प्रत्याशित परिणाम न प्राप्त हो सका तो इस विफलता का श्रेय संविधान को नहीं बल्कि उन लोगों की अकुशलता को मिलना चाहिये जिन्होंने संविधान को कार्यान्वित किया है। संविधान चाहे जितना ही अच्छा क्यों न हो पर एक दुर्बल, अदक्ष और कौशलहीन प्रशासन जनता को सुख पहुंचा नहीं सकता है। इस संविधान के पीछे एक ऐसा शासन है जिसका संचालन देश के बड़े बड़े नेता कर रहे हैं और मेरा ख्याल यह है कि परीक्षण के लिये कम से कम दस साल तक तो इस संविधान पर हमें अमल करना ही चाहिये।

इन निदेशक सिद्धान्तों को रखा गया इस लक्ष्य की प्राप्ति के लिये राष्ट्र निर्माण का वृहत् काम पूरा किया जा सके। जनता के प्रतिनिधियों ने प्रशासकों को अनुदेश-लिखत के रूप में इन सिद्धान्तों को दिया है। मैं यह अवश्य कहूंगा कि इनको और आदेशात्मक रूप में संविधान में रखना चाहिये था। संविधान में राष्ट्र-निर्माण की जिस योजना की कल्पना की गई है वह उतनी विशद और निश्चित नहीं है जितनी कि होनी चाहिये थी। उदाहरण के लिये शिक्षा सम्बन्धी उपबंध का ही मैं हवाला दूंगा। इस उपबंध में प्रशासन के लिये यह अनिवार्य नहीं बनाया गया है कि एक निश्चित अवधि के अन्दर उसे जनता को अमुक शिक्षा स्तर पर ला ही देना होगा। आज राज्य का नारा होना चाहिये "शिक्षित बनाओ" "शिक्षित बनाओ" ताकि देश में लोकतंत्रीय व्यवस्था सफल हो सके। समाज की आर्थिक व्यवस्था के सम्बन्ध में भी संविधान में भी यही बात है।

पर अगर विभिन्न आवश्यकताओं के बीच समन्वय लाने का काम ठीक तरह से नहीं किया गया और नेताओं ने उदारता से काम न लेकर तात्कालिक स्थिति पर ही विशेष ध्यान दिया तो अन्ततोगत्वा बैलट बक्स का ही सहारा लेना होगा और इसके निर्णयानुसार ही सारी व्यवस्था करनी होगी। संविधान की सबसे बड़ी देन यही है कि उसने मतपत्र-पेटिका (बैलट बक्स) को ही प्रमुख निर्णायक माना है।

मैं इस बात से इन्कार नहीं करता हूं कि मतपत्र-पेटिका की प्रणाली में ही बहुतेरे दोष हैं और कुछ लोगों ने इसे भारत के लिये अनुपयुक्त बतलाया है। परन्तु अपने लिये जिस तरह का संविधान हमने बनाया है उसमें मतपत्र-पेटिका की व्यवस्था से बचने का कोई उपाय नहीं है। अब यह बात हम पर निर्भर करती है कि इस पद्धति को हम दोषमुक्त रखें और यह खुद सीखें और सिखावें मतपत्र-पेटिका को पवित्र धरोहर मानकर ही हमें इसको व्यवहार में लाना चाहिये। अगर केवल मतपत्र-पेटिका भ्रष्टाचार से मुक्त रही तो कार्यपालिका को कितने ही मनमाने अधिकार क्यों न दिये जायें डरने की कोई बात नहीं है। कार्यपालिका को तो अपने मालिक का हुक्म मानना होगा और उसका मालिक वही होगा जिसे मतपत्र पेटिका मालिक बनावे। यहां यह सुझाव भी दिया गया है मतपत्र-पेटिका की पद्धति के स्थान पर यह होना चाहिये था ग्राम पंचायतों को शासन का घटक माना जाता और इन पंचायतों पर शासन को आधृत रखा जाता ताकि और अधिक सही और सच्ची लोकतंत्रात्मक शासन व्यवस्था यहां स्थापित हो पाती। इस सम्बन्ध में मैं यह स्वीकार करूंगा कि विकेन्द्रित शासन व्यवस्था के लिए समाज में जो क्रांतिकारी परिवर्तन अपेक्षित है वह अभी हम नहीं ला पाये हैं। सत्य और अहिंसा के महान पुजारी की शिक्षाओं के बावजूद भी हम अपने जीवन-विचार राजनीति को ऐसा आध्यात्मक मूलक नहीं बना पाये हैं कि विकेन्द्रित शासन व्यवस्था यहां स्थापित की जा सके। इसके लिये समाज में एक क्रांतिकारी परिवर्तन अपेक्षित है और वह परिवर्तन जिस दिन समाज में आ जायेगा इस संविधान में परितर्वन करना ही पड़ेगा। किन्तु आज तो हमें इस संविधान को एक महान् कृतित्व समझ कर इसका अभिनन्दन करना चाहिये। अब इस संविधान को हमें विश्वास और आशा की भावना

[श्री बसन्त कुमार दास]

से क्रियान्वित करना और अपना पूरा सहयोग अपने नेताओं को देना चाहिये जिन्होंने इसकी रचना की है और जिन्हें हम इसके लिये उपयुक्त समझते हैं कि इस संविधान को चालू करके देश को बलशील, सम्पन्न और सुरक्षित बना सकेंगे।

इन शब्दों के साथ संविधान की स्वीकृति के लिये जो प्रस्ताव रखा गया है उसका समर्थन करता हूं।

***श्रीमती जी. दुर्गाबाई** (मद्रास: जनरल): अध्यक्ष महोदय, जो संविधान हम देश को देने जा रहे हैं उसकी विस्तृत समीक्षा यहां मेरे वक्ताओं ने बड़े पाण्डित्यपूर्ण ढंग से की है। मैं उनकी बातों को दुहराना नहीं चाहती हूं क्योंकि विधिविषयक एवं संविधानिक जानकारी मेरी इतनी ज्यादा नहीं है कि सभा के समक्ष कही गई बातों पर मैं कुछ और प्रकाश डाल सकूं। फिर मैं यह भी समझती हूं कि इस समय बजाय इसके कि हम पीछे की ओर देखें और संविधान के गुण दोषों को ढूंढने के लिये सैद्धान्तिक दृष्टि से इसकी विवेचना करें अच्छा यह होगा कि हम आगे की ओर देखें और इसे क्रियान्वित करने की ओर ध्यान दें। संविधान को परखने का मापदण्ड केवल एक है। लोकतंत्रीय संविधान का प्रयोजन यही होता है कि एक ऐसी व्यवस्था निकाली जाये और स्थापित की जाये जिसके द्वारा जनमत का पता लग सके और जनमत के अनुसार ही सारी बातों की व्यवस्था की जा सके। हमें देखना यह है कि क्या अपना संविधान इस प्रयोजन को पूरा करता है या नहीं। विचार हमें इसी बात पर करना है। जब संविधान में सभी वयस्कों को मताधिकार दिया गया है और कार्यपालिका को नियंत्रण में रखने की पर्याप्त व्यवस्था की गई है तथा मूलाधिकारों की सुरक्षा की प्रत्याभूति दी गई है तो मैं नहीं समझती कि कोई विवेकी आदमी यह कह सकता है कि जिस लोकतंत्रीय प्रयोजन के लिये संविधान बनाये जाते हैं उसकी पूर्ति इससे नहीं हो पाती है और न इससे इस बात का मौका मिल सकेगा कि प्रशासन के काम में जनता की मरज़ी को प्राधान्य प्राप्त रहे। मैं यह कहना चाहती हूं श्रीमान कि संविधान निर्माताओं का न यह उद्देश्य होता है और न होना चाहिये कि संविधान में वह किसी विशेष राजनीतिक दल की विचार-धारा को ही महत्व दें। यह ठीक ही हुआ है जो यह काम जनता पर छोड़ दिया गया है। जनता को इस बात की स्वतंत्रता रहनी चाहिये कि इच्छानुसार वह देश के भाग्य का निर्माण करे और अपनी मरज़ी के मुताबिक शासन व्यवस्था रखे। जब तक संविधान में जनमत को प्राधान्य प्राप्त रहता है उसकी इच्छा के अनुसार ही सारा काम होना चाहिये। संविधान निर्माताओं की यह गलती होती अगर वह संविधान में रखे गये उपबंधों में किसी खास राजनीतिक विचारधारा को ही प्राधान्य देते। संविधान का काम यही है कि जनता को वह इस बात की पर्याप्त स्वतंत्रता दे कि अपनी अपनी राजनीतिक विचारधारा का प्रचार कर सके। संविधान द्वारा जनता को इस बात का साधन प्राप्त रहना चाहिये कि जब तक जनमत के अनुसार शासन व्यवस्था चलती है जनता अपनी इच्छा को प्राधान्य दिला सके।

समाजवादी इस बात की शिकायत कर सकता है कि संविधान में समाजवादी दल के सिद्धान्तों को स्थान नहीं दिया गया है। किन्तु अपना यह संविधान न तो

समाजवादी संविधान है, न साम्यवादी संविधान है और जहां तक किसी वाद का संबंध है यह पंचायत-राज्य संविधान भी नहीं है। यह संविधान जनता का संविधान है जिसमें देशवासियों को इस बात की पूरी आजादी दी गई है कि समाजवाद या साम्यवाद अथवा जिस किसी वाद के सम्बन्ध में उनका यह विश्वास हो कि उससे देश सुखी और सम्पन्न हो सकता है, उसका वह यहां प्रयोग करें। संविधान निर्माता अगर अपनी राजनीतिक विचार धारा को संविधान में रखते तो यह उनकी गलती होती। संविधान को उन्होंने जो बिल्कुल शत प्रतिशत जनता का संविधान बनाया है यह उन्होंने ठीक ही किया है।

नैराश्य के आवेश में कुछ कठोर आलोचकों ने यहां तक कह डाला है कि इस संविधान का महत्व उतना ही है जितना कि "मोटर वेहिकिल टेक्सेशन ऐक्ट" का है। यह तो बड़ी ओछी आलोचना है। इस संविधान में पहले पहल वयस्क मताधिकार की व्यवस्था की है, मूलाधिकारों की प्रत्याभूति दी है। देश की सैंकड़ों बुराइयों को दूर करने में तथा देश को सशक्त और एक बनाने में इसे आश्चर्यजनक सफलता प्राप्त हुई है। क्या इस संविधान का वही महत्व है जो "मोटर वेहिकिल टेक्सेशन ऐक्ट" का है? यह आलोचना, जैसाकि मैं यह कह चुकी हूं बड़े सस्ते ढंग की ओछी आलोचना है।

लोकतंत्रीय शासन व्यवस्था के लिये जो विभिन्न संविधानिक परिमाण रखे गये हैं उनके बारे में मैं कुछ नहीं कहूंगी। यह ऐसा विषय है जिस पर यहां कई वक्ताओं ने पाण्डित्य पूर्ण विवेचन किया है। जैसा कि मैं कह चुकी हूं अब हमें इस संविधान के सहारे भविष्य का निर्माण करना है। वयस्क मताधिकार के गुण दोषों पर यहां बहुत से लोगों ने अपनी राय जाहिर की है। वयस्क मताधिकार की व्यवस्था एक बड़ी सुन्दर व्यवस्था है अगर देश हित का ध्यान रखते हुए लोग इसको अमल में लायें। प्रश्न यह है कि इस चरम परिणति की प्राप्ति के लिए हमें क्या करना चाहिये।? यह कहा जाता है कि वयस्क मताधिकार की व्यवस्था से ऐसी विस्तृत शक्तियां बन्धनमुक्त होकर क्षेत्र में आ जायेंगी जो शायद राष्ट्रीय हित को ध्यान में न रखकर केवल वर्गीय हितों के लिए काम करने लग जायेंगी। अधिकार के ऐसे दुरुपयोग के विरुद्ध पर्याप्त परित्राण की व्यवस्था करने का काम निर्भर करता है नेताओं पर जो देश का भाग्यसूत्र अपने हाथ में लेने जा रहे हैं और संविधान को कार्यान्वित करने जा रहे हैं। मैं नहीं समझती कि यह काम उतना कठिन है जितना लोग समझते हैं। अगर हम केवल इतना कर दें कि इस सभा की सदस्यता को यानी संसद की सदस्यता को असाधारण प्रतिष्ठा या शक्ति का पद न बनाकर इसे कठोर कर्तव्य का गम्भीर दायित्व का कठिन श्रम और सुरक्षा काम का पद बना दें तो यह समस्या आसानी से हल हो जायेगी। संसदात्मक लोकतंत्र की बहत सी त्रुटियां अपने आप दूर हो जायेंगी। पर तभी जब ऐसा किया जाये। हमें एक ऐसा उपाय निकालना चाहिये कि निर्वाचित प्रतिनिधियों के बारे में लोग यह समझें कि वह किसी विशेष अधिकार और सुविधा प्राप्त वर्ग के आदमी नहीं है बल्कि ऐसे लोग हैं जो यहां बात करने के अलावा—जैसा कि अभी हम कर रहे हैं—गम्भीर दायित्व और कठोर कर्तव्यों का भार वहन करते हैं। निर्वाचित प्रतिनिधियों की स्थिति को, उनके पद को जब तक यह यही महत्व देते रहेंगे

[श्रीमती जी. दुर्गाबाई]

जो उन्हें आज प्राप्त है, संसद में स्थान पाने के लिये तथा अधिकार पाने के लिये लोग इसी तरह लालायित रहेंगे। जब हमें इस बात का विश्वास हो जायेगा और हम दूसरों की समझ में यह बात ला देंगे कि निर्वाचित प्रतिनिधियों का पद केवल प्रतिष्ठा और मर्यादा नहीं है जहां भाग्य सुधर सकता है बल्कि कठिन परिश्रम और कठोर कर्तव्य का पद है तभी प्रतिनिधियों के चुनाव के बारे में लोग आवश्यक नियंत्रण से काम ले सकेंगे।

मैं सभा का अधिक समय नहीं लूंगी श्रीमान। मैं संविधान की केवल एक बात का उल्लेख करूंगी। जिसके कारण अपना संविधान अमेरिकन संविधान से भिन्न है। यद्यपि अपना संविधान फेडरल संविधान है पर इसमें देश के लिये दो तरह के न्यायालयों की एक तो फेडरल विधियों के प्रशासन के लिए और दूसरा राज्यों की विधियों के प्रशासन के लिये व्यवस्था नहीं की गई है। इसमें सभी न्यायालय एक न्यायपालिका के अंग हैं जिन के शिखर पर है उच्चतम न्यायालय। उच्चतम न्यायालय के ठीक नीचे हैं विभिन्न राज्यों के उच्च न्यायालय और इनके नीचे हैं राज्यों के छोटे-छोटे न्यायालय। पर इन सभी न्यायालयों को अर्थ सम्बन्धी और स्थान सम्बन्धी परिसीमनों के अधीन रहते हुए देश की सभी विधियों के प्रशासन का, चाहे वह संसद निर्मित हों या राज्य के विधान मण्डलों द्वारा निर्मित हों, अधिकार प्राप्त हैं।

संविधान के विरुद्ध और कई तरह की आलोचनायें भी यहां की गई हैं पर मेरे पास इतना समय नहीं है कि उन सबका जवाब दूं। क्योंकि जैसा कि अध्यक्ष महोदय ने कहा है हमें अन्य वक्ताओं के लिये भी समय निकालना होगा।

मैं केवल एक या दो आलोचनाओं का जिक्र करूंगी। संविधान के विरुद्ध यह कहा गया है कि इसमें गांधी विचारधारा की किसी भी बात को स्थान नहीं दिया गया है। मैं यह कहती कि मूलाधिकार सम्बन्धी अध्याय को आप देखिये। पर मूलाधिकारों की भी यहां आलोचना की गई है और कुछ लोगों ने तो मूलाधिकारों की बड़ी तीव्र आलोचना की है। उन्होंने यहां तक कहा है कि इन मूलाधिकारों का महत्व उतना भी नहीं कितना कि उस कागज का जिस पर यह लिपिबद्ध किये गये हैं। क्या मूलाधिकारों को सर्वथा महत्वशून्य इस लिये समझा गया है कि इनको कई प्रतिबंधों से जकड़ दिया है। किन्तु न केवल इस देश के कानून शास्त्र में बल्कि दुनिया भर के कानून शास्त्रों ने जिन प्रतिबन्धों को मान्यता दी है उनसे ये सर्वथा संगत है और सभी देशों के संविधानों ने इन प्रतिबन्धों को ठीक माना है। पूर्ण अधिकार तो होने ही नहीं चाहिये। अधिकारों को प्रतिबन्धित करना आवश्यक है।

अपने संविधान के विरुद्ध एक यह भी आलोचना मैंने सुनी है कि इसमें नागरिकों के कर्तव्य क्या होंगे यह नहीं बताया गया है। इसमें केवल अधिकारों का ही उल्लेख किया गया है। मूलाधिकारों पर जो प्रतिबन्ध लगाये गये हैं उनके बारे में मैं कुछ ज्यादा नहीं कहना चाहती। जब नागरिक संविधान के अनुसार अधिकारों का दावा

करता है तो उसे इस बात का भी ध्यान रखना चाहिये कि उस राज्य के प्रति उसके कतिपय कर्तव्य भी हैं जिससे वह अधिकार पाने की और रक्षण पाने की उम्मीद रखता है।

उस अध्याय पर दृष्टिपात कीजिये जिसमें राज्य की नीति के निदेशक सिद्धान्तों की बात कही गई है। उसमें यह कहा गया है कि ये सिद्धान्त केवल सिद्धान्त के रूप में रखे गये हैं, किसी न्यायालय द्वारा इन पर अमल नहीं कराया जा सकता है। राज्य की आर्थिक और सामाजिक नीति क्या होगी इसके बारे में संविधान में एक घोषणा दी जाती है। यह एक प्रथा है जो सर्वत्र प्रचलित होती जा रही है। प्राचीन भारत में भी यह प्रथा प्रचलित थी। अपने अर्थशास्त्र में राजा को दिये गये एक आदेश का उल्लेख आया है जो यों है:—

"अनाथ, मरणासन्न, अशक्त, दुखी तथा असहाय व्यक्तियों की परवरिश की व्यवस्था राजा करेगा। असहाय स्त्रियों की, प्रसव धारण करने वाली स्त्रियों की और उनसे उत्पन्न शिशुओं की परवरिश की व्यवस्था भी राजा करेगा।"

अर्थशास्त्र का यह मूल आदेश है जिस का राजा को पालन करना ही होगा। अपने केन्द्रीय तथा राज्यों के शासनों के लिए भी यही आदेश निदेशक सिद्धान्त होना चाहिये।

यहां यह बात भी कही गई है कि अपना संविधान, जो एक लोकतंत्रात्मक संविधान है वह सुचारू रूप से काम नहीं कर सकता है अगर देश राष्ट्र मंडल का अंग बन कर रहता है जैसा कि हम लोगों ने पसन्द किया है। इस आलोचना के सम्बन्ध में मैं कुछ नहीं कहना चाहती। यह आलोचना हमें अन्य कई सूत्रों से भी सुनने को मिली है। उसके सम्बन्ध में मैं ज्यादा कुछ न कहकर केवल एक ही बात कहना चाहती हूं। मैं नहीं समझती कि यह कठिनाई ऐसी कठिनाई है जो अजेय है। इसके सम्बन्ध में भी मैं यही कहूंगी कि प्राचीन भारत में ऐसी व्यवस्था रही है। ग्रंथों में ऐसा उल्लेख आया है कि लिच्छवी का लोकतंत्र सदस्य या साझीदार के रूप में चन्द्रगुप्त के साम्राज्य का अंग बनकर रहा है। उस समय के शाही सिक्कों पर दोनों राज्यों के नाम खुदे हुए मिलते हैं। श्री बेरीडेल कीथ का यह कहना है कि राष्ट्रमंडल में रह कर, अगर विभिन्न लोकतंत्रों को सुचारू रूप से काम करने की गुंजायश नहीं रहती है तो फिर यह बात ही सन्देहास्पद है कि राष्ट्र मण्डल स्थायी हो सकेगा। इसलिये ठीक यह होगा कि सम्मिलित रूप से काम करने के लिए हम कुछ प्राधिकारियों को मान लें। इसलिये मेरा कहना यह है कि हमें ऐसा ख्याल करने की जरूरत नहीं है कि राष्ट्र मण्डल के अन्दर रहकर संविधान पर अमल करने में हमें कोई कठिनाई हो सकती है।

आखिरी बात जो मैं कहना चाहती हूं और जो कम महत्व की नहीं है वह यह है: आज सवेरे समाचार पत्रों में मैंने पढ़ा है कि भारत सरकार ने जल्द से जल्द आंध्र का एक पृथक प्रांत बनाने के लिये कुछ उपाय तय कर लिये हैं। इसके लिये एक विभाजन परिषद् गठित करने का उसने फैसला किया है। यह ठीक ही हुआ है जो विस्तार की बातों को तय करने का काम परिषद् पर छोड़ दिया गया है और यह तय किया गया है भारत सरकार परिषद् के काम में कोई

[श्रीमती जी. दुर्गाबाई]

दखल नहीं देगी। इस समाचार से मुझे बड़ी प्रसन्ता है और आशा करती हूं कि गठित होने वाली विभाजन परिषद् कोई ऐसा काम करेगी जो वहां वालों के शान्त और सुव्यवस्थित जीवन के लिये जिसका कि अब तक वह उपभोग करते आ रहे हैं, हानिप्रद होगी।

***श्री डी.वी. सुब्रमन्यम्** (मद्रास: जनरल): अध्यक्ष महोदय, संविधान के इस मसौदे में जिसे चन्द दिनों के अन्दर हम संविधान के रूप में अपनाने जा रहे हैं, हमने उस मार्ग को प्रशस्त करने के लिये जिससे होकर राज्य की नौका चलेगी केवल प्रकाश स्तम्भ भर खड़े कर दिये हैं। राज्य-नौका की पतवार होगी हमारे नये प्रधान मंत्री के हाथ में और करीब पांच सौ संसद सदस्य होंगे उसके नाविक। भारतीय लोकतंत्र के प्रधान का कर्तव्य यह होगा कि पथ प्रदर्शन देकर हम सबको लक्ष्य स्थल तक पहुंचाने में सहायक हों। हमारा लक्ष्य या गन्तव्य क्या है यह प्रस्तावना में दिया हुआ है। संविधान में 395 अनुच्छेद जो हैं वही प्रकाश स्तम्भ हैं। इस मार्ग का ठीक ठीक निर्माण करेंगे भावी संसदों के सदस्य लोग। आगे की कठिनाइयों को सोच समझ कर और अन्य राष्ट्रों के अनुभवों से लाभ उठाते हुए अपने नेताओं की बुद्धिमत्ता और दूरदर्शिता से तथा माननीय सदस्यों के सहयोग और सहायता से हमने अब एक योजना तैयार कर ली है। हम सबको परमात्मा से यह प्रार्थना करनी चाहिये कि वह हमें पर्याप्त बल और बुद्धि दे कि सभी अदृश्य बाधाओं से नौका को निकाल कर पार पहुंच जायें।

अपनी यात्रा शुरू करने जा रहे 26 जनवरी सन् 1950 को जिस दिन कि हम देशवासियों की भलाई के लिए संविधान के प्रत्येक शब्द को और प्रत्येक भावना को व्यवहार में लाने का व्रत हम लेंगे। साथ ही जनता को भी यह समझना चाहिये कि राज्य के प्रति उसका कर्तव्य क्या है और राज्य के साथ कंधे से कंधा मिलाकर उसे काम करना चाहिये। मूलाधिकारों में तथा राज्य की नीति के निदेशक सिद्धान्तों में जो उपबंध रखे गये हैं वह इस बात के पर्याप्त प्रमाण हैं कि भारत जनता के हित सदा ध्यान रखेगा।

जैसा कि अपने ऋषियों ने व्यवस्था की थी अपना प्राचीन समाज आधृत था वर्ण और धर्म पर अर्थात् इस बात पर प्रत्येक वर्ण का अमुक कर्तव्य होगा। किन्तु काल के प्रभाव से अब सभी वर्ण अपने कर्म को छोड़ बैठे हैं। आज सामाजिक व्यवस्था में ऐसा परितर्वन अपेक्षित हो गया है कि लोग अपनी अपनी रुचि के अनुसार अपने लिये व्यवसाय चुन सकें तथा सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक जीवन में सबको समान अवसर मिल सके। फिर आज का समाज जन्म या पद के आधार पर मनुष्यों में कोई भेद नहीं बरतना चाहता है। गत कई शताब्दियों से हमें सामाजिक व्यवस्था में यह सब आवश्यक परिवर्तन करने का मौका नहीं मिल पाया था। आज विदेशी शासन का यहां से लोप हो गया है इसलिये हम इस संविधान को अंगीकार कर रहे हैं।

प्राय: करके सभी देशों के संविधान बने हैं युद्ध या क्रांति के ठीक बाद। हम लागों का यह सौभाग्य है कि हम संविधान बना रहे हैं ऐसे समय में जब कि देश विभाजन के फलस्वरूप उत्पन्न कुछ उपद्रव के सिवाय देश में सर्वत्र स्वाभाविक स्थिति वर्तमान है। इस अवसर पर श्रद्धा से मैं सर झुकाता हूं राष्ट्रपिता के प्रति जिनके अनुपम नेतृत्व में उनके बताये गये आदर्शों पर चल कर हम

इस मंजिल तक पहुंच पाये हैं। मेरा ख्याल है कि अपना संविधान यथा समय ठीक ठीक काम करने लग जायेगा। अभी प्रारम्भ में ही इसकी आलोचना करना बुद्धिमत्ता की बात न होगी।

यदि हम आदर्श भारत का निर्माण करना चाहते हैं तो अपने नव राज्य को ध्यान देना होगा इस बात पर कि राज्य के व्यक्तियों का निर्माण किया जाये। यदि व्यक्ति पूर्ण है तो राज्य भी पूर्ण बन जायेगा। इस काम में समय लगेगा। ऐसे व्यक्तियों द्वारा या व्यक्तियों के समूह द्वारा परिचालित शासन जो कि मनसा और कर्मणा पूर्ण है, राम राज्य कहलाता है जो महात्मा जी की आदर्श था?

इस संविधान में मुझे एक कमी दिखाई देती है। शालिवाहन शमाबद्ध जैसे एक नये सम्वत्सर की स्थापना के लिये इसमें कोई उपबंध नहीं रखा गया है। शालिवाहन सम्वत्सर के अनुसार यह 1872वां साल चल रहा है और कलि के हिसाब से 5051वां साल चल रहा है। मैं यह चाहता हूं कि संविधान के प्रवर्त्तन में आने के साथ ही सारे राजकीय प्रयोजनों के लिए हमें गांधी संवत्सर के नाम से एक नया सम्वत्सर चालू करना चाहिये। और इस सम्वत्सर के प्रथम वर्ष का पहला दिन वह होना चाहिये जिस दिन या तारीख को गांधी की की हत्या की गई थी। गांधी जी के जन्म या मृत्यु का दिन ऐसा दिन है जिस दिन से एक नया सम्वत्सर चलाना सर्वथा उचित है।

गांधी संवत्सर की प्रमुख विशेषता यह होगी कि राज्य के बजाये व्यक्ति को समुचित अधिक महत्व दिया जाये। राज्य में अंगभूत व्यक्तियों के व्यक्तित्व के विकासार्थ समुचित स्थिति पैदा करने की आवश्यकता पर ही गांधी ने अपने सभी लेखों और भाषणों में सदा जोर दिया है। वह इस आदर्श की पूर्ति सर्वथा सम्भव समझते थे पर केवल उसी स्थिति में जब शक्ति का आर्थिक एवं राजनीतिक दोनों शक्तियों का—सर्वथा विकेन्द्रीकरण कर दिया जाये। अपने कतिपय साथियों के इस विचार से मैं अपने को सर्वथा सहमत पाता हूं कि इस संविधान ने देश में ऐसी स्थिति लाने पर कत्तई ध्यान नहीं दिया है। संविधान में राजनीतिक शक्तियों को इतना केन्द्रित कर दिया गया है कि यह सम्भावना ही खतरे में पड़ गई है कि शक्तियों का विकेन्द्रीकरण यहां हो पायेगा जो कि मानव समाज के विकास के लिए शक्तियों को विकेन्द्रित करना परमावश्यक है।

इन शब्दों के साथ मैं उपस्थित प्रस्ताव का समर्थन करता हूं।

***श्री के.एम. जेढे** (बम्बई: जनरल): अध्यक्ष महोदय, मैं खड़ा हो रहा हूं डॉ. अम्बेडकर और उनके साथियों को धन्यवाद देने के लिये कि उन्होंने भारत के इस नये संविधान की रचना में इतना बड़ा योगदान दिया है। इस काम में हमने करीब तीन साल लगा दिये हैं। और तब कहीं आज हम इस महत् कार्य को पूरा कर पाये हैं। कुछ सदस्यों ने डॉ. अम्बेडकर को बधाई देते हुए उन्हें आधुनिक मनु की उपाधि दी है। मुझे विश्वास है कि वह इस उपाधि को कभी पसन्द न करेंगे। चार वर्गों की स्थापना मनु ने ही की है जिसमें अछूतों को उन्होंने निम्नतर स्थान दिया है अत: मैं जानता हूं कि मनु के प्रति डॉ. अम्बेडकर घृणा

[श्री के.एम. जेढे]

भाव रखते हैं। मुझे याद है कि सन् 1929 में मोहाद की एक बड़ी सार्वजनिक सभा में मनुस्मृति को उन्होंने जलाया था। हरिजनों के वह महान नेता हैं और हरिजन उन्हें अपना हितैषी मान कर उनकी अभ्यर्थना करते हैं। और देवता की तरह पूजते हैं। हरिजनों को उन पर गर्व है। वे लोग उन्हें भीम कहते हैं और जनता को यह बताते हैं कि उन्होंने भीम स्मृति की रचना की है। मैं भी इस संविधान को भीम-स्मृति कहता हूं गोकि मैं स्पृश्य वर्ग का आदमी हूं। डॉ. अम्बेडकर एक बड़े कानून वेत्ता हैं और महती मेघा और योग्यता रखने वाले व्यक्ति हैं। उनकी उन खूबियों से कौन इनकार कर सकता है। अस्पृश्यता अब कानून द्वारा समाप्त कर दी गई है। संविधान बनाने में हरिजनों के हितों को सुरक्षित रखने का उन्होंने तत्परता के साथ ध्यान दिया है। सभी हरिजनों को उनका कृतज्ञ होना चाहिये। और साथ ही हम सबको कृतज्ञ होना चाहिये। राष्ट्रपिता महात्मा गांधी के प्रति जिन्होंने हमें स्वतंत्रता दिलाई। वह एक महान पुरुष थे जिन्होंने अपने जीवन काल में अस्पृश्यता को दूर करने का बड़ा प्रयास किया था। उनकी महती इच्छा यही थी कि हरिजनों को सवर्णों के स्तर पर ला दिया जाये। आज वह हम लोगों के बीच में नहीं हैं कि अपनी बस महती इच्छा को पूर्ण देखते और हमें अपना आशीर्वाद देते क्योंकि वह एक क्रूर और अधम षड्यंत्र के शिकार हो चुके हैं।

सरदार वल्लभभाई पटेल को भी मैं बधाई देता हूं कि भारत के एकीकरण का काम आपने इस साफल्य के साथ सम्पादित किया है। न्याय प्रशासन में आप बड़ी दृढ़ता, कठोरता और अनुशासन प्रियता से काम लेते हैं। ब्रिटिश अमलदारी के दिनों में स्वराज्य आन्दोलन के लिये देशी नरेश बड़ी बाधा सिद्ध हो रहे थे। सरदार पटेल ने इन नरेशों को सर्वसाधारण के स्तर पर ला दिया है और अब उन्होंने विशिष्ट होने के गर्व का परित्याग कर दिया है। आज सम्पूर्ण भारत एक हो गया है जिस का श्रेय सरदार पटेल को ही मिलना चाहिए। इस अवसर पर केति मैं आदर सम्मान व्यक्त किये बिना नहीं रह सकता।

अपना संविधान अब प्राय: तैयार हो चुका है। इसमें केन्द्र को बहुत सशक्त बना कर रखा गया है और प्रान्तों के बहुत से अधिकार कम कर दिये गये हैं। केन्द्र को सम्राट की स्थिति मिल गई है और प्रान्तों को केन्द्र के सर्वथा अधीन कर दिया गया है। संविधान में वयस्क मताधिकार की व्यवस्था की गई है जिसके लिये हम सब को अपने भाग्य की सराहना करनी चाहिये। इक्कीस वर्ष से ऊपर की आयु वाले सभी नर नारियों को मताधिकार दिया गया है जिसके लिये यहां बहुतों ने अश्रुपात किया है। वयस्क मताधिकार की व्यवस्था के विरुद्ध उन्होंने जो तर्क उपस्थित किया है वह बड़ा स्वार्थपूर्ण है। उनका कुल यही है कि इस देश के लोग सर्वथा अशिक्षित और ज्ञानशून्य हैं। पर इस स्थिति के लिये दोषी कौन है? सारा दोष है उच्च वर्ग वालों का क्योंकि अपने स्वार्थ के लिये उन्होंने देशवासियों को सदा अशिक्षित और अज्ञानी रखा है। अगर हम लोकतंत्र चाहते हैं, जनता का शासन चलाना चाहते हैं तो किसी भी वयस्क को मताधिकार से हम वंचित नहीं रख सकते हैं। हमसे कहा यह जाता है कि संविधान में लोकतंत्रीय व्यवस्था रखी गई है। संविधान ने राष्ट्रपति को असीम अधिकार दे रखा है और मुझे बड़ी आशंका इस बात की है कि लोकतंत्र की जगह यहां तानाशाही शासन चलने लगेगा और

केन्द्र को इतना सशक्त कर देने से मनमानी करने की प्रवृत्ति उसमें आ जायेगी। जो भी है अभी हमें यह देखना चाहिये कि संविधान कैसा काम करता है और जनता को कहां तक सन्तुष्ट करता है।

हम लोगों ने बड़ी आशा बांध रखी थी संविधान के प्रारम्भण पर आंध्र प्रांत की स्थापना के साथ संयुक्त-महाराष्ट्र का भी एक अलग प्रान्त बना दिया जायेगा। पर इस सम्बन्ध में हम लोगों को बड़ी निराशा मिली है। आंध्रवासी बन्धुओं को अपना अलग मिल गया है इसके लिये हम उनको बधाई देते हैं। और हम उनकी प्रशंसा करते हैं कि अपनी मांग के लिये उन्होंने एक होकर प्रयास किया है। हम महाराष्ट्री लोग भी महाराष्ट्री भाषा भाषियों के लिये संयुक्त महाराष्ट्र नाम के एक अलग प्रान्त की जिसमें बम्बई भी शामिल रहे, मांग जरूर करते आये हैं पर हमें इसमें सफलता इस लिये नहीं मिल सकी कि हम एक नहीं थे। मध्य प्रान्त के कुछ सदस्य महाविदर्भ के पक्ष में थे और बम्बई की प्रान्तीय कांग्रेस कमेटी इस पक्ष में थी बम्बई को एक अलग घटक के रूप में रखा जाये। हम लोग यह नहीं चाहते हैं कि महाराष्ट्र का विभाजन हो। बम्बई प्रसिडैंसी में और कुछ अरसे तक रहने के लिये हम तैयार हैं। हम अभी भी आशान्वित हैं कि संयुक्त महाराष्ट्र प्रान्त की स्थापना अवश्य होगी जिसमें बम्बई का शहर भी शामिल रहेगा। प्रतीक्षा करने के लिये अपेक्षित धैर्य हम रखते हैं और यह आशा करते हैं कि जिस रूप में हम अपना प्रान्त चाहते हैं वह हमें अवश्य मिलेगा। इस सम्बन्ध में शंकर राव देव और काका साहिब गाडगिल भी मेरा समर्थन करेंगे। बस मुझे इतना ही कहना था।

***श्री सतीश चन्द्र सामन्त** (पश्चिमी बंगाल: जनरल): अध्यक्ष महोदय, अपना भाषण प्रारम्भ करने से पहले मैं अपनी हार्दिक श्रद्धांजलि अर्पित करना चाहता हूं उन लोगों के प्रति जिन्होंने देश के लिये अपने प्राणों की, अपने स्वातन्त्र्य की और जीवन के सभी सुखों की आहुति दे दी है और जिनके इन महान त्याग के फलस्वरूप हम आज स्वतन्त्र हो पाये हैं। स्वाधीनता मिलते ही हमने संविधान-निर्माण का काम प्रारम्भ किया था और आज यह समाप्ति पर आ गया है। यह संविधान, जिसे हम अपने लिये अंगीकार करने जा रहे हैं, आधृत है लोकतंत्रीय व्यवस्था के आधार पर। आज सारी दुनिया लोकतन्त्र के पीछे है और हम भी इसी व्यवस्था का अनुसरण कर रहे हैं। श्री अब्राहम लिंकन के मतानुसार लोकतन्त्र से अभिप्रेत है ऐसा शासन जो जनता का शासन हो और जनता के लिये हो तथा जो जनता के चुने हुए प्रतिनिधियों द्वारा संचालित हो। उसी सिद्धान्त के आधार पर हमने अपना संविधान बनाया है। लोकतन्त्रीय व्यवस्था के अनुसार हम सब यहां आने के लिये चुने गये हैं और यथाशक्ति अपने ज्ञानानुसार हमने यह संविधान तैयार किया है। कई बातों के सम्बन्ध में वैयक्तिक मतभेद होने पर भी हमने बहुमत के निर्णय को मान्यता दी है। अब अगर हम संविधान के गुण दोषों पर विचार करते हैं तो इससे कुछ लाभ नहीं होगा।

जहां तक कि संविधान बनाने का सम्बन्ध है मैं आपको बताऊं कि 29 जुलाई सन् 1934 को कांग्रेस ने इसके लिये एक संविधान सभा गठित करने की मांग की थी। किन्तु तत्कालीन ब्रिटिश शासकों ने हमारी इस मांग को स्वीकार नहीं किया। अब अपने त्याग और प्रयास के फलस्वरूप हमने इस संविधान सभा का

[श्री सतीश चन्द्र सामन्त]

गठन किया है। यह संविधान जिसे हम देश को देने जा रहे हैं वह एक ऐसी वस्तु है जिसे हमें सच्ची भावना से स्वीकार करना चाहिये और सच्चाई के साथ इस पर हमें अमल करना चाहिये। हम भारत के लोगों ने ही इसे बनाया है और अगर इसमें कोई त्रुटि है तो उसे हमें स्वीकार करना चाहिये और उसको लेकर हमें असन्तोष न प्रकट करना चाहिये क्योंकि भारत के लोग तथा उनके प्रतिनिधि जिन्होंने संविधान की रचना की है, वह वही रहेंगे जो वह हैं।

इसलिये इस पर असन्तोष प्रकट करने की कोई बात नहीं है। कई मित्रों ने संविधान के गुण दोषों की चर्चा की है। मैं मानता हूं कि इसमें कुछ दोष हैं पर अब हम उन दोषों से बच कैसे सकते हैं? मैं उन लोगों में हूं जो इस संविधान के बन जाने पर अपनी खुशी ज़ाहिर कर सकते हैं क्योंकि जो बुनियादी बातें हम चाहते हैं वह सब संविधान में हैं। बावजूद उन दोषों के जो संविधान में हैं, हम लोगों को, जिन्होंने कि इस संविधान की रचना की है, संविधान के अनुच्छेदों को देश की भलाई के लिये सच्ची भावना के साथ कार्यान्वित करना चाहिये। अगर हम ऐसा नहीं करते हैं तो अपने कर्तव्य का पालन नहीं करते हैं। इसलिये संविधान में जो भी खामियां हों इसकी सफलता वस्तुतः बहुत कुछ निर्भर करती है इस बात पर कि हम इसको कार्यान्वित किस तरह करते हैं। सुतरां संविधान के रचयिताओं से, संविधान सभा के सदस्यों से इस बात का आग्रह करूंगा कि वह लोग अब से एक साल तक जब कि नया आम चुनाव शुरू नहीं हो जाता है अपने अपने निर्वाचन क्षेत्रों की जनता को संविधान के उपबन्धों को समझायें और निर्वाचकों को शिक्षा देकर योग्य नागरिक बनायें ताकि संविधान को समुचित ढंग से कार्यान्वित करने के लिये वह लोग सही सही आदमियों को अपना प्रतिनिधि चुनें। जब तक निर्वाचकों को इतनी शिक्षा नहीं मिल जाती है कि सही आदमियों को वह अपना प्रतिनिधि बनाकर भेज सकें, तब तक, यह संविधान कितना भी उत्तम क्यों न हो इससे देश को कोई लाभ न पहुंचेगा। मैं वर्तमान शासन से भी यही अनुरोध करूंगा कि आगे साल तक वह अनिवार्य वयस्क शिक्षा की व्यवस्था चलाकर निर्वाचकों को शिक्षित बना दें ताकि संविधान से हमें वांछित परिणाम प्राप्त हो सके।

एक शब्द मैं कहना चाहता हूं वयस्क मताधिकार के सम्बन्ध में। एक ग्रामीण तथा साधारण नागरिक होने के नाते ग्रामीणों की त्रुटियों को मैं जानता हूं। जब तक हम उन्हें यह जानने का मौका नहीं देते हैं कि वह क्या हैं, उनका उत्थान कभी नहीं हो सकेगा। गांवों में अच्छे आदमी रहे हैं और अब भी हैं। अगर उन पर वास्तविक दायित्व दिया जाये तो उनमें हर आदमी अपनी योग्यता सिद्ध कर सकेगा और अपना यह संविधान सफलता पूर्वक कार्यान्वित किया जा सकेगा।

मैंने इस बात के लिये एक संशोधन रखा था श्रीमान कि मूलाधिकारों में ग्राम-पंचायतों की स्थापना की बात भी रखी जाये। यह बात मूलाधिकारों में तो नहीं रखी गई पर निदेशक सिद्धान्तों में इसको स्थान अवश्य दिया गया है। यदि ग्राम-पंचायतों का ठीक-ठीक गठन किया जाता है जैसा कि निदेशक सिद्धान्तों से प्रावहित किया गया है तो महात्मा गांधी की इच्छा अवश्य पूरी हो जायेगी। इस संविधान में कई अनुच्छेद ऐसे रखे गये हैं जिनके द्वारा राष्ट्रपिता के आदर्शों को पूरा करने का प्रयास किया गया है। उनके आदर्शों को हमें पूरा करना ही चाहिये।

अन्त में मैं सभी से यह अपील करूंगा कि आप संविधान की आलोचना न कीजिये, आप कीजिये यह कि इसके उपबन्धों पर सेवा भावना से अमल कीजिये ताकि राष्ट्रपिता की इच्छायें पूरी हो सकें। इन शब्दों के साथ मैं अपनी बात खतम करता हूं।

काका भगवन्त राय (पटियाला तथा पूर्वी पंजाब राज्य-संघ): साहब सदर, मेरे बहुत से मुहतरिम साथियों ने इस अपने ही बनाये हुए विधान के मुतालिक तरह तरह के ख्यालात का इज़हार किया। मुझे कुछ हैरानी भी हुई। कभी कभी खुशी भी। जहां तक मैं देखता हूं मुझे तो इस विधान में एक इनकलाब की बुनियाद नज़र आती है। सालहा साल की स्यासी जद व जहद, बेमिसाल कुर्बानियों के बाद हिन्दुस्तान आज़ाद हुआ और आज़ाद हिन्दुस्तान की विधान सभा बनाई गई। हिन्दुस्तान में खुशी की लहर दौड़ गई मगर रियासती लोगों ने उम्मीद भरी नज़रों से देहली की इस बड़ी सभा की तरफ देखा। ज्यूं ज्यूं वक्त ग़ुज़रता गया हिन्दुस्तान के अवाम के सामने अपने ख़ूबसूरत मुस्तक़बिल का नक़शा साफ़ होता गया और रियासती लोगों ने शख्सी निज़ाम से छुटकारा पाया। छोटी-छोटी रियासतें खत्म करके यूनियन्ज़ की शक्ल दे दी गई। और हिन्दुस्तान से बड़े मुल्क में बराबर का हिस्सा दिया गया। हिन्दुस्तान के अवाम को अपनी हुकूमत खुद अपने वोटों से बचाने का हक़ दिया। सही मानों में कहा जा सकता है कि आने वाले दौर में हिन्दुस्तान की हुकूमत की बागडोर हिन्दुस्तान के अवाम को दे दी गई। मुझे तो ऐसा महसूस होता है कि इस प्राचीन मुल्क की तारीख में यह अपनी ही क़िस्म का है पहला इनक़लाब जब कि राजाओं महाराजाओं या उनके खुशामदियों के हाथों से हुकूमत छीन कर आम लोगों के हाथों में दे दी गई है हुकूमत करने का पैदाइशी हक़ खत्म हुआ। इस इनक़लाब को संभालना अब लोगों का काम है इस खूबसूरत ख्यालात पर बनाये हुये विधान में ज़िन्दगी खूबसूरत अमल से पैदा हो सकती है। जो कि मुल्क के लोगों और उनके लीडरों का ज़िम्मा है। मैं जानता हूं मुल्क के अवाम भोले और इल्म से अनपढ़ और बेबहरा हैं और क़िसम क़िस्म के लोग और रंग बिरंग की जमातें अपने अपने अन्दर से उनके जज़बात से खेलेंगी। मगर यह कुछ थोड़े से समय के लिये हो सकता है। मुझे तो खौफ़ दिखाई देता है। इस विधान के चालू होते ही मुल्क के पिछड़े हुए लोग एक क़ुदरती ताक़त की मदद से उठेंगे सदियों से ग़ज़बशुदा हुक़ूक़ पर ख़ुद क़ाबिज़ होंगे। और वह बड़ा इनक़लाब जो इस वक्त इस विधान में बन्द एक ख्वाब नज़र आता है अपनी सही शक्ल में आयेगा। और जो नक़शा अपने दिमाग़ में लेकर हमारे महबूब लीडरों (पूज्य बापू जी) ने स्यासी जद व जहद की थी वह अपने जोबन पर होगा। और जो कहानियां हम अपने मुल्क के इल्म व हुनर व तहज़ीब व तमुद्दन दौलत व सरवोत के पढ़ते और सुनते आये हैं एक हक़ीक़त बन कर फिर दुनिया को खुशी व मुहब्बत व खूबसूरती का पैग़ाम देगा। विधान में हरिजनों के मुताल्लिक़ ज़िक्र किया गया है और जब हम इस सभा में इस मजमून पर ज़िक्र करते थे और इस पर बहस की भी जरूरत होती थी मेरा तो सिंर शर्म से झुक जाता था। मैं तो कहूंगा कि हिन्दुस्तान के उन लोगों ने जो खुद को ऊंची जाति का लोग कहते हैं किस जुल्म ज़बर से एक फ़िरक़ा को छोटी जाति का नाम देकर किस तरह सदियों तक तरह तरह के नीच काम करने पर मजबूर किया। मुझे नहीं मालूम हिन्दुस्तान व हिन्दुस्तान के लोगों को ऊंचा कहने वाले किस तरह ऊंचा कहते थे? मैं तो कहूंगा कि जिस मुल्क में इन्सान और इन्सान में भेद रखा जाता था

[काका भगवन्त राय]

और रखा जाता है वह बहुत छोटा और घटिया मुल्क है। हिन्दुस्तान के अछूत व हरिजन सदियों इस तरह कुचले व रौंदे गये हैं अगर आप उनको हिन्दुस्तान की हुकूमत देकर भी प्रायश्चित करना चाहें तो नहीं होता है। इस बढ़ते हुए दौर में ऐसा भी वक्त आयेगा जब आने वाली नसलें इस हरिजन व छूत छात के मुताल्लिक़ पढ़ा करेंगी तो अपने बुज़ुरगों के कारनामों को पढ़कर शर्म से सिर नीचा किया करेंगी। इसके साथ साथ में यह भी कह दूं कि सदियों पुरानी फ़िरक़ा परस्ती जो हिन्दुस्तानियों के दिमाग़ों पर किसी न किसी शक्ल में छाई हुई थी और ज़िन्दगी की हर चीज़ फ़िरक़ा परस्ती के तराजू में तोली और नापी जाती थी। यहां तक कि हिन्दुस्तान का पानी भी हिन्दू व मुसलमान पानी के नाम से पुकारा जाता था। फ़िरक़ों के नाम पुराने देश के टुकड़े के लिये और वह फ़िरक़ा परस्ती जिसका शिकार भोले भाले हिन्दू, सिख, मुसलमान आज से दो सौ साल पहले हुए जिस फ़िरक़ा परस्ती के नाम पर ईश्वर और उसके बनाये हुए बंदों को क़तल किया गया उस फ़िरक़ा परस्ती को हमेशा के लिये ख़त्म करके स्यासत में मज़हब एक दूसरे से अलायहदा किया है।

साहब, जहां तक सूबों और सेण्टर का ताल्लुक़ है देखा गया है कि सेण्टर को बहुत ताक़तवर व मज़बूत किया गया है। ठीक ऐसे बहुत बड़े मुल्क की मरकज़ी हुकूमत का ताक़तवर होना लाज़मी है जैसा कि तारीख से ज़ाहिर है जब जब भी मरक़ज़ी हुकूमत कमज़ोर हुई सूत्रों के गवर्नरों ने बग़ावत की। और अपने ही राज के झंडे गाड़ दिये। मैं तो यह कहे बग़ैर नहीं रह सकता कि अंग्रेज़ ने पहली बार हिन्दुस्तान को इकट्ठा किया और एक मज़बूत मरकज़ी हुकूमत दी और हर हिन्दुस्तानी में हिन्दुस्तानी होने का एहसास पैदा हुआ मगर हम सदियों इतने तंग दायरे में रहे हैं कि मैं अब भी देखता हूं हम हिन्दुस्तान के नहीं बल्के सूबों और फिरकों के ढंग पर सोचते हैं यह मैं मानता हूं कि मरकज़ की मज़बूती के साथ मुल्क के तमाम हिस्सों का मज़बूत होना लाज़मी है क्योंकि दिमाग़ी, जिसमानी व रूहानी तौर पर जब तक जिस्म के तमाम हिस्से मज़बूत न हों तमाम जिस्म मज़मूई तौर पर मज़बूत नहीं होता। मगर तमाम हिस्सों से काम लेने के लिये सेन्टर में एक दिमाग़ होना चाहिये जो कि सब हिस्सों का मुनासिब और ठीक इस्तेमाल करे और सबको ठीक नशो नुमा पाने का मौक़ा दे। यही सूरत हमारे मरक़ज़ और सूबों की होनी चाहिये।

आखिर में एक रियासती नुमाइन्दा होने के नाते जिनको इस विधान में बराबर का दर्जा दिया गया है हिन्दुस्तान की इस एसेम्बली और हरमन प्यारे प्रधान डॉक्टर राजेन्द्र प्रसाद का शुक्रग़ुज़ार हूं जिन्होंने रियासती मसलों को दीगर सूबों के बराबर दरजा दिया। इसके बाद मैं अपने महबूब लीडर सरदार पटेल का शुक्रग़ुज़ार हूं जिन्होंने किस मज़बूती और खूबसूरती से राजाओं से ताक़त छीन कर अवाम को दे दी। सदियों पुराने निज़ाम को खत्म करके राजाओं और अवाम को एक सफ़ में खड़ा किया। मुझे तो जनाब इस विधान में साफ़ नज़र आता है कि हिन्दुस्तान में हमेशा के लिये तलवार राज खत्म हुआ प्यार राज शुरू हुआ।

***श्री जयपाल सिंह** (बिहार: जनरल): अध्यक्ष महोदय, आपने एक ही बात बार-बार यहां ना दुहराने की सलाह हम लोगों को अवश्य दी है पर अगर अनुमति हो तो थोड़ी देर के लिये आपके इस परामर्श को भूल कर के डॉ. अम्बेडकर और कठिन परिश्रम का भार वहन करने वाले साथियों ने संविधान निर्माण के काम में जो अथक प्रयास किया है उसके लिये उन्हें धन्यवाद दूं तथा आपके प्रति

भी कृतज्ञता ज्ञापित करूं उस असीम धैर्य के लिये जिसका कि परिचय आपने सभा के कार्य संचालन में यहां दिया है। आपके प्रति एवं मसौदा समिति के सदस्यों के प्रति कृतज्ञता ज्ञापन करते समय मैं, संविधान सभा के कार्यालय के कर्मचारियों द्वारा की गई ज्ञात एवं अज्ञात महती सेवाओं को भी मैं भूल नहीं सकता हूं। मैं समझता हूं कि संविधान सभा के छोटे से छोटे से लेकर बड़े से बड़े सभी कर्मचारी हमारी कृतज्ञता के पात्र हैं। संविधान सभा के हम सदस्यों को तो अपने पद के कारण कठिन श्रम करना ही पड़ा है पर कार्यालय के कर्मचारियों ने हमें अपनी सेवाएं प्रदान करने में बड़ी निष्ठा और परिश्रम का परिचय दिया है। उस तमाम अवधि में जब तक कि हम यहां रहे हैं, इन्होंने जिस तत्परता, सेवा भावना और श्रम से काम किया है उसकी हम सबको यहां सराहना करनी चाहिये। संविधान सभा के कार्यालय का एक भी कर्मचारी अगर बेकाम हो जाता है तो इससे संविधान की पवित्रता में बट्टा लग जायेगा। अतः मैं आशा अवश्य करता हूं कि ऐसी स्थिति न आने दी जायेगी कि इस कार्यालय का कोई कर्मचारी बेकाम हो जाये। निजी तौर पर मैं यही देखना चाहता हूं कि चाहे जैसे हो संविधान सभा का प्रत्येक कर्मचारी जिसने संविधान में हमारे साथ काम किया है वह अगर यहां के भावी कार्यालय में अगले साल से नहीं खपाया जा सकता है तो अन्यत्र कहीं न कहीं किसी दफ्तर में उसे अवश्य काम में लगा दिया जायेगा। मैं नहीं समझता कि इस सम्बन्ध में इस कार्यालय के किसी विभाग विशेष का खास तौर पर नामोल्लेख करने की मुझे ज़रूरत है। हम सभी जानते हैं कि इस कार्यालय के वर्तमान सभी कर्मचारियों ने किस तत्परता के साथ यहां काम किया है। चाहे हिसाब किताब की बात रही हो या पेट्रोल दिलाने का काम रहा हो या सुविधानुसार आवास स्थान के प्रबन्ध की बात रही हो अथवा फरनीचर दिलाने का काम रहा हो इन्होंने हर काम में सदा मुस्तैदी का परिचय दिया है। मैं यह महसूस करता हूं कि मुझे इनकी सेवाओं की सराहना यहां अवश्य कर देनी चाहिये क्योंकि फाइनांस कमेटी का सदस्य होने के नाते मैं जानता हूं कि इन्होंने कितनी लगन और मेहनत से यहां काम किया है। इनकी सेवाओं का उल्लेख करने में मुझे अधिक ख्याल हो रहा है उन लोगों का जिनके काम को हमने कभी देखा नहीं, जो लोग इस इमारत की ऊपर की मंज़िलों में बैठकर काम करते रहे हैं। मुझे केवल उन्हीं लोगों का ख्याल नहीं है जो काम के सिलसिले में रोज़ हमारे सामने आया करते थे।

मैं नहीं समझता कि संविधान के सम्बन्ध में कुछ कहना मेरे लिये ज़रूरी है। इस संविधान की रचना हमी ने की है। मैं जानता हूं कि कुछ क्षेत्र ऐसे हैं जो इससे पूर्णतः सन्तुष्ट नहीं हैं। यह स्वाभाविक बात है। कोई भी संविधान देश के सभी वर्गों को खुश नहीं कर सकता है फिर भारत जैसे विशाल देश का तो कहना ही क्या है फिर भी मेरा ख्याल यही है कुल मिला कर अपना यह संविधान सन्तोषप्रद ही है न कि असन्तोषप्रद। मुझे इस बात का बड़ा विश्वास है कि मानव निर्मित अपना यह संविधान सफल ही सिद्ध होगा अगर इसे कार्यान्वित करने में लोग सच्चाई और उदारता से काम लें। संविधान की कई बातों से हो सकता कि अभी लोगों को चिन्ता होती हो। पर संविधान में ऐसी बातें हैं जिनसे इस बात की पूरी सम्भावना है कि यह संविधान लोकतंत्रात्मक ही सिद्ध होगा। पर दूसरी ओर कुछ ऐसी बातें भी हैं जो चिन्ता में डालने वाली हैं और जिनके कारण हो सकता है कि यहां का शासन सर्वेसर्वा बन जाये। इसमें सभी बातें हैं। अब यह हमारा काम है कि हम इसे जैसा चाहे बनावें। इस संविधान में लचीलापन

[श्री जयपाल सिंह]

है जिसके आधार पर हम इसे चाहे जैसा बनावें। संविधान में लिपिबद्ध किये गये शब्दों का कोई महत्व नहीं होता है। कालान्तर में चल कर महत्व रखती है वस्तुतः वह सजीवता जो हम इसमें लिपिबद्ध किये गये शब्दों को देते हैं।

मैं जानता हूं आदिवासियों से सम्बन्ध रखने वाली बहुत सी ऐसी बातें हैं जो संविधान में नहीं लिपिबद्ध की गई हैं। उदाहरण के लिये, हमें अभी भी यह नहीं मालूम हो पाया है कि राष्ट्रपति अनुसूचित क्षेत्र घोषित करने के बारे में किस तरह काम करेगा। हमें यह नहीं मालूम है कि विभिन्न अनुसूचित जातियों की सूची किस तरह तैयार की जायेगी। हमें अभी भी इस बात का पता नहीं है कि इन क्षेत्रों का शासन केन्द्र से एक रूप में होगा ताकि जहां अनुसूचित जातियां हैं उन प्रान्तों का काम इस सम्बन्ध में विनियमित रूप में हो। इनमें किसी भी बात का उल्लेख संविधान में नहीं हुआ है फिर भी मैं पर्याप्त विश्वास के साथ यह कहता हूं कि अनुसूचित जातियों का तथा औरों के सामने सुन्दर भविष्य अवश्य आयेगा क्योंकि इस देश के भविष्य को बनाना या बिगाड़ना, इस संविधान को बनाना या बिगाड़ना हम लोगों पर निर्भर करता है। इस महत् विश्वास को लेकर ही मैं इस संविधान का सम्यक् समर्थन करता हूं।

***श्री ए. थानू पिल्ले** (त्रिवांकुर राज्य): अध्यक्ष महोदय, अब हम एक बहुत ही महत्वपूर्ण कार्य की समाप्ति पर आ गये हैं। इस संविधान को अब हम अन्तिम रूप से स्वीकार करने जा रहे हैं और एक ऐसे महान देश के लिये जिसकी परम्परा ऐसी अटूट रही है जिसका कि अन्य कम ही देश अभिमान कर सकते हैं। यह देश से एक ऐसे सुन्दर भविष्य की सतत कामना करता रहा है जो मूलाधिकारों वाले तथा राज्य की नीति के निदेशक सिद्धान्तों वाले अध्याय में लिपिबद्ध की गई हमारी आकांक्षाओं को पूर्ण कर सकता हो।

संविधान के सभी अनुच्छेदों पर हम यहां द्वितीय पठन के अवसर पर विस्तार पूर्वक सोच विचार कर चुके हैं और इनके विरुद्ध की गई सभी आलोचनाओं का जवाब उस समय डॉ. अम्बेडकर जैसे योग्य वकील ने दे दिया है। अब तो हम अपने काम की परिसमाप्ति पर पहुंच गये हैं। वयस्क मताधिकार के विरुद्ध यहां चाहे जो भी आलोचना की गई हो पर मैं तो इस व्यवस्था को संविधान का प्राण मानता हूं। इस व्यवस्था को स्वीकार करके हमने सर्वथा एक उचित और न्यायपूर्ण काम ही किया है। वस्तुतः मुझे इस बात पर आश्चर्य हो रहा है कि अभी भी इसके विरुद्ध आपत्ति उठाई जा रही है। इस व्यवस्था को रखना न केवल लोकतंत्रीय सिद्धान्तों के ख्याल से ही ठीक है बल्कि देश की स्थिति को देखते हुए भी इस व्यवस्था का रखना परमावश्यक है। आज राष्ट्र की मनोदशा क्या है इसका हमें ध्यान रखना होगा। वयस्क मताधिकार के अलावा और भी कोई व्यवस्था है क्या जो आज देशवासियों को सन्तुष्ट कर सकती है? मेरा तो यह निश्चित मत है कि संविधान के आधार के लिये इससे कम कोई बात और रखी ही नहीं जा सकती थी।

मेरे पास समय बहुत कम है और खास करके मैं केवल उन चन्द बातों को बताने के लिये ही खड़ा हूं जिनका संविधान को कार्यान्वित करने में हमें ध्यान

रखना चाहिये। मैं श्री सन्थानम से सर्वथा सहमत हूं जिन्होंने यह कहा है कि संविधान के समस्त उपबन्धों को देश को पूरी तरह समझा देना चाहिये और जहां तक हो सके जल्द से जल्द हमें चुनाव कर लेना चाहिये। संविधान में विभिन्न दोषों की चर्चा यहां की गई है पर आम तौर पर इसके बारे में यही मत व्यक्त किया गया है और मैं भी इससे सहमत हूं कि राष्ट्र के सभी कामों का नियंत्रण संविधान द्वारा जनता के हाथ में ही दिया गया है। वयस्क मताधिकार की व्यवस्था इसी लिये तो रखी गई है। पर होना अब यह चाहिये कि जल्द से जल्द चुनाव कर लेना चाहिये। इसमें अगर और देर की जाती है तो वह संकट का कारण सिद्ध हो सकती है। फिर चुनाव के सम्बन्ध में हमारे सामने बहुत सी कठिनाइयां हैं। निजी अनुभव के आधार पर मैं यह जानता हूं कि वयस्क मताधिकार के आधार पर होने वाला चुनाव क्या होता है और इस सम्बन्ध में मैं सभा को एक बात जरूर बता देना चाहता हूं। मैं जो कहने जा रहा हूं उसको लेकर किसी गलत फहमी की कोई गुंजाइश नहीं है। मैं कहने यह जा रहा हूं कि वयस्क मताधिकार के आधार पर होने वाला निर्वाचन सही सही होना चाहिये जिसमें मतदाता स्वतन्त्रतापूर्वक इच्छानुसार मतदान कर सकें। सभी दलों की राजनीतिक नेताओं को, अधिकारारूढ़ दल के नेताओं को यथाशक्ति इस बात की चेष्टा करनी चाहिये कि चुनाव बिल्कुल ठीक ठीक हो और लोग स्वतन्त्रतापूर्वक इच्छानुसार मतदान कर सकें। मैं जानता हं श्रीमान कि कांग्रेसी शासनों में भी आज चुनाव में लोगों को स्वतन्त्रतापूर्वक मतदान करने का मौका नहीं मिल पाता है। पूर्ववर्ती शासन के अधिकारियों के दुराचरण को अपने वर्तमान शासन के अधिकारियों ने अब विरासत के रूप में अपना रखा है। पूर्ववर्ती शासन ने तो देश के कई भागों में अपने कृपापात्र अभ्यर्थियों को जिताने के लिये हर तरह की अनुचित कारवाइयां की हैं पर मुझे खेद के साथ कहना पड़ता है कि वर्तमान शासन द्वारा परिचालित चुनावों में भी आज अधिकारी उसी पुरानी नीति पर अमल कर रहे हैं। चाहे जो भी अधिकारारूढ़ हों उनका यह कर्तव्य है—और केन्द्रीय शासन का विशेषरूप से यह कर्तव्य है कि वह इस बात का ख्याल रखें कि चुनाव में लोगों को स्वतन्त्रतापूर्वक मतदान करने का पूरा मौका मिले। मुझे इस बात की बड़ी खुशी है कि नये संविधान के अधीन इन सब बातों को देखने का अधिकार केन्द्र को दिया गया है यानी निर्वाचन-आयोग को नियुक्त करने का अधिकार केन्द्र को दिया गया है और निर्वाचन का पूरा नियंत्रण जैसे कि निर्वाचन सूची का तैयार करना निर्वाचन सम्बन्धी वादों का निपटारा करना—यह सब काम निर्वाचन आयोग के तत्वावधान में होगा जिसकी नियुक्ति करेगा केन्द्र। संविधान बनाने में मुख्यत: इस विचार से काम लिया गया है कि जहां तक हो केन्द्र को यथासम्भव विस्तृत अधिकार प्राप्त रहें और प्रादेशिक घटकों के अधिकार यथासम्भव सीमित रहें। उस विचार धारा से मैं चाहे कितना भी असहमत क्यों न हूं पर इस बात से मैं सर्वथा सहमत हूं कि इस बात का पूरा प्रबन्ध संविधान में रहना चाहिये कि निर्वाचन सही सही हो और स्वतन्त्रतपूर्वक लोग मतदान कर सकें।

कांग्रेसी हुकूमत के खिलाफ़ तरह तरह की शिक़ायतें लोग कर रहे हैं। कांग्रेस शासन जनता के लिये कुछ नहीं कर रहा है, वह भ्रष्टाचार से अपने को ऊपर नहीं रख रहा है—इस तरह की शिकायतें आज सभी कर रहे हैं। इन सब शिक़ायतों का एक मात्र उत्तर और प्रभावोत्पादक उत्तर यही है कि शक्ति खुद जनता के हाथ में दे दी जाये और सही ढंग से दी जाये। फिर इन सभी शिक़ायतों की

[श्री ए. थानू पिल्ले]

जवाबदेही जनता पर आ जायेगी। पर यह बात तभी हो सकती है जब चुनाव निर्वाद हों। किसी दल को अधिकारारूढ़ होने के नाते जो सुविधायें प्राप्त रहती हैं शासन के अधिकार प्राप्त रहते हैं उनका रंचमात्र भी उपयोग दल को लाभान्वित करने के लिये नहीं दिया जाना चाहिये। यदि इस बात की उपेक्षा को जाती है तो लोकतन्त्र का कोई मतलब न रह जायेगा। वर्तमान शासन को वयस्क मताधिकार के आधार पर किये गये निर्वाचन के फलस्वरूप अधिकारारूढ़ हुआ नहीं है। इस लिये इसे सही माने में हम लोकशासन नहीं कह सकते हैं। हमें जल्द से जल्द वास्तविक लोकशासन की यहां स्थापना कर देनी चाहिये।

दो एक बातों की चर्चा मैं यहां और कर देना चाहता हूं। भाषा के आधार पर प्रान्तों के बनाने का जहां तक सम्भव है मेरा मत यह है—इसको आप इतना ही महत्व दें जितना इसे मिलना चाहिये—कि प्रान्तों की रचना के बारे में भाषा को जरूरत से ज्यादा महत्व दिया जा रहा है। इसमें शक नहीं कि प्रशासन के काम में भाषा का बढ़ा महत्वपूर्ण हाथ होता है पर भाषा ही वहां सब कुछ नहीं है। भाषा की ही तरह और भी बहुत सी जरूरी बातें हैं जिनका नये प्रान्त बनाते समय हमें पूरा ध्यान रखना चाहिये। उदाहरण के लिये, यहां कोचीन, ट्रावंकोर और मालाबार को मिलाकर केरल का एक नया प्रान्त बनाने का जो सुझाव रखा गया है उसके बारे में मैं सुझाव रखने वालों से यह कहूंगा कि वह इस बात पर भी विचार करें कि आर्थिक दृष्टि से इस प्रदेश को कहां तक एक ठोस घटक बनाया जा सकता है। इस प्रश्न पर आर्थिक दृष्टि से भी विचार कीजिये और यह सोचिये कि क्या ठीक यह होगा कि इन प्रदेशों को मिलाकर एक पर्याप्त साधन शून्य नया प्रान्त बनाया जाये या अगर वर्तमान प्रांतों में हेर फेर करना जरूरी हो तो यह करना ठीक होगा कि इन प्रदेशों को मद्रास प्रान्त के जिलों में मिला दिया जाये ताकि एक ठोस, मजबूत और साधन सम्पन्न राज्य दक्षिण भारत में स्थापित हो जाये। यह सुझाव यहां मैं उन सभी लोगों के विचारार्थ रख रहा हूं जिन्हें इस प्रश्न से दिलचस्पी है। अभी यह कहा जाता है श्रीमान कि तमिल लोग यह नहीं चाहते हैं कि मलयालम वाले उनके प्रान्त में रहें और मलयालम वाले तमिलों को नहीं चाहते हैं। यदि हमारी यही मनोदशा रही तो भारतीय संघ टिकेगा कैसे? भाषा के आधार पर प्रान्त बनाये जायें इस विचारधारा का परिणाम यह हुआ कि देश में ऐसी स्थिति पैदा हो गई है कि लोग यह कहने लग गये हैं कि हम उन लोगों के साथ रह नहीं सकते हैं जो हमसे भिन्न भाषा बोलते हैं। मुझे तो कोई कारण समझ में नहीं आता है कि आखिर भिन्न भाषा भाषियों के साथ क्यों नहीं रह सकते हैं। हमारी अपनी रियासत में तमिल भी हैं और मलयाली भी हैं और दोनों का परस्पर सम्बन्ध अच्छा है। भाषावार प्रान्तों को बनाने की मांग ने अब कई कठिनाइयां पैदा कर दी हैं। इस स्थिति के लिये जो लोग जिम्मेदार हैं उनसे मैं यह कहूंगा कि वह इस प्रश्न पर और गम्भीरता से विचार करें और इसके पीछे जो कठिनाइयां हैं उनका भी वह ख्याल रखें।

अब श्रीमान, मुझे चन्द सुझाव रख देना है भाषा सम्बन्धी प्रश्न के सम्बन्ध में। मुझे बड़ी खुशी है कि संविधान में एक उपबन्ध इस आशय का रख दिया

गया है कि किसी भी राज्य में हिन्दी राजभाषा के रूप में अपनाई जा सकती है। इस सम्बन्ध में मुझे एक बात कहनी है। मैं इस उपबन्ध पर बहुत जोर देना चाहता हूं और यह सुझाव रखना चाहता हूं कि कोई प्रान्त भले ही हिन्दी भाषी न हो पर शासन सम्बन्धी प्रयोजनों के लिये प्रशासन के उच्च स्तर पर हिन्दी को ही हमें अपनाना चाहिये। राष्ट्र के राजनीतिक जीवन में अब हिन्दी को वही स्थान मिल जाना चाहिये जो अंग्रेज़ी को प्राप्त है। मैं जानता हूं कि मेरी इस राय को अहिन्दी भाषी प्रान्तों में शायद लोग स्वीकार न करें। अपनी इस राय के खिलाफ मैं प्रभावशाली व्यक्तियों को पाता हूं जिनके हाथ में आज शिक्षा सम्बन्धी कामकाज की बागडोर है और जिनका मत यह है कि प्रान्त या राज्य की भाषा ही वहां राजभाषा होनी चाहिये। मैं इन लोगों से सहमत नहीं हूं। मैं यह चाहता हूं कि जब अंग्रेज़ी को हटाना है तो उसकी जगह हिन्दी को ही हमें स्थान देना चाहिये। अंग्रेज़ों से हमारा कितना ही मतभेद क्यों न रहा हो तो हमें यह बात न भूलनी चाहिये कि उन्होंने हमारा एक बड़ा भारी उपकार किया है। हम यहां आज क्यों कर समवेत हुए हैं? आप यहां मेरी बात क्यों कर समझ रहे हैं और आपकी बात को मैं क्यों कर समझने में समर्थ हो रहा हूं? इसका कारण यह है कि हम सबने यहां एक भाषा अपना रखी है, हम सब अंग्रेजी के जरिये ही अपना विचार व्यक्त कर रहे हैं। मैं यह सोच रहा हूं कि अब हमें अंग्रेज़ी का स्थान एक भारतीय भाषा को देना चाहिये और वह भाषा एक मात्र हिन्दी ही हो सकती है। अत: अंग्रेजी का स्थान अब हिन्दी को मिलना ही चाहिये। आप खुद विचार कीजिये श्रीमान, कि आगे चलकर हमें कितने ऐसे प्रश्नों पर विचार करना होगा जो हम सबके लिये समान रूप से आवश्यक होंगे। अगर ट्रांवकोर या तामिलनाड से कोई आदमी किसी काम के सिलसिले में आता है तो उसे हिन्दी जाननी ही होगी। चाहे किसी अनुसंधान संस्था से सम्बन्धित किसी सभा के प्रसंग में या किसी भारतीय सम्मेलन के प्रसंग में कोई यहां आवे, अगर उसे सभा की कारवाई में भाग लेना है तो उसे हिन्दी जानना ही होगा। इसी तरह हजारों ऐसी और बातें हैं जो समस्त राष्ट्र के लिये समान रूप से आवश्यक हैं और समस्त राष्ट्र को उन पर विचार करना होगा। विधान मण्डल में ऐसे ही सदस्य होने चाहिये जो हिन्दी जानते हों। तामिलनाड के विधान मण्डल का काम आखिर किस जुबान में होगा? हर आदमी हिन्दी को सीख क्यों न ले? समस्त देश में हिन्दी की पढ़ाई अनिवार्य हो जानी चाहिये। जो भी हो अंग्रेज़ी के स्थान पर हिन्दी अब प्रतिष्ठित हो ही जानी चाहिये। मैं यह नहीं चाहता हूं कि अंग्रेज़ी को बिल्कुल हटा ही दिया जाये। हमारे बच्चे हिन्दी अंग्रेजी और अपनी जुबान इन तीनों को ही सीखने का सामर्थ्य रखते हैं। मेरा अपना मत तो यही है। कुछ लोगों का यह कहना है कि तामिलनाड में अगर प्रशासन का काम तामिल भाषा में नही चलाया जाता है तो वहां के ग्रामीण आपकी बात समझेंगे नहीं और प्रान्त का शासन चलाना असम्भव हो जायेगा। मैं इससे सहमत नहीं हूं। जहां तक ग्रामीणों का सवाल है आप उनके लिये उस भाषा में आदेश या अनुदेश निकाल सकते हैं जिसको वह जानते हैं। किन्तु जहां तक कि प्रान्तीय सचिवालय में उच्च स्तर पर होने वाले प्रशासन सम्बन्धी कामों का सम्बन्ध है, वहां हमें हिन्दी का ही प्रयोग करना चाहिये। अन्यथा समस्त देश एक असुविधा में पड़ जायेगा और उसके सामने बड़ी कठिनाइयां आ जायेंगी जिनके फलस्वरूप शासन का चलना बिल्कुल असम्भव सा हो जायेगा। इस प्रश्न पर मैं और भी बहुत कुछ कह सकता था पर आपके आदेश के विरुद्ध मैं जाना नहीं चाहता हूं श्रीमान।

[श्री ए. थानू पिल्ले]

एक और बात का मैं यहां जिक्र कर देना चाहता हूं, केन्द्र को बड़े व्यापक अधिकार दिये गये हैं। निजी तौर पर मैं यह जरूर महसूस करता हूं कि केन्द्र को आवश्यकता से अधिक अधिकार दे दिया गया है। जो लोग कि इस बात के लिये जिम्मेदार हैं उनके मन में यह विश्वास जरूर रहा होगा कि केन्द्र तो कभी गलती न करेगा और उससे कभी चूक न होगी पर प्रान्त सम्भवतः सदा ही ग़लती करेंगे। इसी विश्वास के आधार पर ही केन्द्र को उतने व्यापक अधिकार दिये गये हैं। पर मैं इस विचार से सहमत नहीं हूं। अपनी सभी बातों की देखभाल प्रान्त भी उसी तरह कर सकते हैं जिस तरह कि केन्द्र अपनी बातों की। यह तथ्य की बात है जिसे हमें मानना ही होगा।

बस एक या दो बातों का मैं और जिक्र करूंगा। विधि निर्माण के प्रश्न को आप लीजिये। सभी आवश्यक विषयों के बारे में, चाहे वह विषय समवर्ती सूची में हों या केन्द्रीय सूची में प्राधान्य प्राप्त रहेगा केन्द्रीय विधि को ही। यह बात मैं सभा की निगाह में ला देना चाहता हूं तथा उन लोगों की निगाह में ला देना चाहता हूं जिन पर आगे चल कर विधि निर्माण की जिम्मेदारी आने वाली है कि देश के कुछ भाग ऐसे हैं जहां देश के शेष भागों की अपेक्षा या बड़े बड़े प्रान्तों की अपेक्षा कई दिशाओं में अधिक प्रगति हो चुकी है। उदाहरण के लिये मैं यही बता दूं कि ट्रावन्कोर राज्य में मृत्यु दण्ड पहले ही उठा दिया जा चुका है। यह एक ऐसा प्रश्न है जिस पर सभा को गम्भीरता से विचार करना चाहिये। 26 जनवरी सन् 1950 को ट्रावन्कोर राज्य में हत्या का अपराधी अभियुक्त फांसी पर लटका दिया जा सकता है। 26 जनवरी के पहले वह मृत्यु दण्ड से मुक्त था। हत्यारे को सहायता देने के लिये मैं यह नहीं कह रहा हूं। हमने जो कानून वहां अपनाया है वह सर्वथा मानवतापूर्ण कानून है और उसके पक्ष में एक प्रबल मत है। सवाल यह है तो क्या हम सब पीछे की ओर चलें? ऐसी स्थिति में वहां हम हत्यारे को फांसी लटकाने के सिवा और कर क्या सकते हैं? 26 जनवरी को वहां हमें ऐसे अपराधी को फांसी लटकाना ही होगा। जो बात मैं आप लोगों के ध्यान में लाना चाहता हूं वह यह है कि देश के छोटे से छोटे प्रदेश में भी जो प्रगति हो चुकी हो उसका हमें ध्यान रखना चाहिये और ऐसा कोई कानून न बनने देना चाहिये जो किसी हुए अच्छे काम को व्यर्थ कर दे। एक-रूपता के लिये पश्चात् गति का मार्ग अपनाना ठीक नहीं होगा। यदि देश के किसी भाग ने किसी दिशा में प्रगति का उच्चतम स्तर प्राप्त कर लिया है तो देश के शेष भागों को भी हमें उसी स्तर पर ला देने की चेष्टा करनी चाहिये। उस प्रसंग में मैं एक और बात का भी उल्लेख कर देना चाहता हूं। यह उल्लेख इस समय विशेष रूप से प्रासंगिक होगा इसलिये कि अभी हिन्दू कोड विधान-मंडल के विचाराधीन है। हमारे प्रदेश में मैसभारथामियों की जो स्वीय विधियां हैं, पारिवारिक विधियां या वैवाहिक विधियां है वह ऐसी हैं...।

***श्री एल. कृष्णस्वामी भारती** (मद्रासः जनरल): इस समय यहां हिन्दू कोड बिल पर हम नहीं विचार कर रहे हैं।

***श्री ए. थानू पिल्लेः** मैं उस बिल पर नहीं बोल रहा हूं। बिल का उल्लेख मैं कर रहा हूं अपनी एक बात का खुलासा करने के लिये और मैं समझता हूं

बिल्कुल कायदे के अन्दर हूं। मैं कहना यह चाहता था कि जीवन की अर्वाचीन कल्पना को देखते हुए हमारे प्रदेश में प्रचलित विधियां अधिक प्रगतिशील हैं और हम अब अगर प्राचीन हिन्दू कानून की अपनाते हैं जो धर्म के संकीर्ण आधार पर बनाई गई हैं तो इसका परिणाम बड़ा दुखद ही होगा। यदि आप समस्त देश के लिये एक व्यवहार-संहिता रखना चाहते हैं तो वह संहिता ऐसी होनी चाहिये जो जीवन सम्बन्धी अर्वाचीन कल्पना से सर्वथा संगत होनी चाहिये। हमारे प्रदेश में नारी समाज सर्वथा स्वतन्त्र है। हमारे जो विवाह सम्बन्धी कानून हैं वह समाज की आधुनिक स्थिति से समाज की आधुनिक समुन्नत कल्पना से सर्वथा संगत हैं। फिर ऐसी स्थिति में जीवन सम्बन्धी उन प्राचीन कल्पनाओं को अपनाना जो आधुनिक जगत को अमान्य है क्या हमारे लिये ठीक होगा? मैं यही चाहता हूं कि प्रश्न के इस पहलू पर भावी विधानमण्डल विचार करे। मैं यह हिन्दू कोड बिल पर विचार करना नहीं चाहता हूं। इतना अनुभव मैं रखता हूं कि यह समझ सकूं कि यहां इस बिल पर नहीं विचार किया जा सकता है। श्री भारती को यह बात मालूम हो जानी चाहिये।

राज्यों के काम में केन्द्र को हस्तक्षेप करने का जो बहुत अधिकार दिया गया है उसके बारे में मुझे एक बात कह देनी है। इस बात से मैं सर्वथा सहमत हूं कि केन्द्र को शक्ति सम्पन्न रखना चाहिये। पर केन्द्र की शक्ति इस बात पर नहीं निर्भर करती है कि कितने अधिक विषय उसके अधिकार में हैं बल्कि निर्भर करती है इस बात पर कि केन्द्र जो कुछ करता है उसमें प्रान्त या राज्य स्वेच्छा से कितना सहयोग देते हैं और स्वेच्छा से कहां तक उसको स्वीकार करते हैं। प्रान्तों या घटकों की गर्दन दबा कर आप उनसे उनका स्वेच्छापूर्ण सहयोग नहीं पा सकते हैं। और न उनसे आजानुवर्तन करा सकते हैं। यह सब तो आपको तभी मिल सकता है जब आप उनको अपना विकास करने की पर्याप्त स्वतन्त्रता दें। राज्यपालों की नियुक्ति के सम्बन्ध में भी, मेरा ख्याल यह है कि हमने गलती की है। राज्यपाल तो वस्तुतः एक नाममात्र का पदाधिकारी होगा। उसको चुनने का काम हम प्रान्त पर ही छोड़ सकते थे।

मैं सभा का और अधिक समय नहीं लेना चाहता हूं। मैं यही आशा करता हूं कि संविधान के समस्त उपबन्ध को इस तरह से कार्यान्वित किया जायेगा कि यथाशक्य कम से कम विग्रह पैदा होगा और प्रान्त ऐसा अनुभव करने लगेंगे कि अपना विकास करने की पूरी स्वतन्त्रता उनको प्राप्त है। मुझे विश्वास है कि प्रान्तों में इस तरह की अनुभूति लाने का केन्द्र पूरा ख्याल रखेगा और कोशिश करेगा।

केन्द्र पर अनेक कर्तव्यों का भार डाला गया है। आज ही समाचार पत्र में मैंने पढ़ा है कि जहां तक लोक-स्वास्थ्य का सम्बन्ध है एक अकेले यक्ष्मा के निवारण का काम शुरू करने के लिये माननीय राजकुमारी अमृत कौर चार सौ करोड़ रुपये चाहती हैं और इस काम में सालाना खर्च लगेगा करीब एक सौ करोड़ रुपया। इसके अलावा मलेरिया तथा अन्य सैकड़ों बीमारियां हैं जिनको रोकने का काम करना होगा। शिक्षा को ही लीजिये। यह कितना जरूरी काम है। हमें देश के सभी बालकों को शिक्षित करना है क्योंकि वयस्क मताधिकार की व्यवस्था हम चालू करने जा रहे हैं। इसके लिये हमें एक बहुत बड़ी रकम खर्च करनी होगी। घटकों के वित्तीय साधनों को चरण सीमा तक कम कर दिया गया है। वह कोई

[श्री ए. थानू पिल्ले]

नया कर तक नहीं लगा सकेगा। नया कर केवल केन्द्र ही लगा सकता है। ऐसी हालत में यह केन्द्र का कर्तव्य है कि वह इस बात की कोशिश करे कि देश का विकास हो। संविधान सभा ने केन्द्र पर इतना भार लाद दिया है कि उसका वहन करना उसके लिये कठिन हो जायेगा। संविधान के उपबन्धों का यही परिणाम होगा। जब राज्यों के वित्तीय साधनों को इस तरह कम कर दिया गया है, जब उन सभी साधनों को जिन पर नया कर लगाकर आय बढ़ाई जा सकती है, केन्द्र के हाथ में रख दिया गया है तो राज्यों से यह कैसे कहा जा सकता है कि वह उद्योगों का विकास करें, कृषि का विकास करें, शिक्षा का प्रसार करें, लोक स्वास्थ्य को समुन्नत करें और मजदूरों की दशा सुधारें? सभी साधन तो केन्द्र के हाथ में दे दिये गये हैं। फिर यह केन्द्र का कर्तव्य हो जाता है कि देश के सर्वोमुखी विकास के लिये निधि का प्रबन्ध करे। आशा है कि केन्द्र अपने दायित्व का वहन करने में सफल होगा और देश क्रमशः उन्नति के शिखर पर चढ़ता जायेगा तथा अपना यह संविधान भारत को वैभव सम्पन्न बनाने में सर्वथा सहायक सिद्ध होगा।

बस मुझे एक बात और कहनी है श्रीमान। इस संविधान की आलोचना में यह कहा जाता है कि यह लचीला नहीं है। पर यह बात नहीं है। हां यह जरूर है कि संविधान के कई उपबन्धों को और अच्छे रूप में लिपिबद्ध किया जा सकता था। दैहिक स्वातन्त्र्य के बारे में भी, मैं यह देखता हूं कि अनुच्छेद 22 में विधि बनाने का अधिकार दिया है केन्द्रीय विधानमण्डल को। आप जैसा चाहें कानून पास कर सकते हैं। पर मैं इस तथ्य की उपेक्षा नहीं कर सकता कि कई बातों के बारे में संविधान में संशोधन करने के लिये, केन्द्रीय विधान मण्डल के दो तिहाई बहुमत को तथा राज्यों के विधान-मण्डल के बहुमत को जरूरी ठहराया गया है। किस तरह इन उपबन्धों पर अमल किया जायेगा, किस तरह ये विग्रह को बचायेंगे और किस तरह सुचारू रूप से इनको काम करने दिया जायेगा, यह बहुत कुछ निर्भर करता है केन्द्र तथा घटकों के पारस्परिक सहयोग की भावना पर।

अब अन्त में मुझे यह कहना है श्रीमान, कि सभा की कार्रवाई को देखते हुए मैं यह जरूर कहूंगा श्रीमान कि मुझे आश्चर्य हो रहा है आपकी धीरता पर जिसका कि आपने सभा के कार्य संचालन में परिचय दिया है। एक असम्भव बात ही यहां क्यों न उठाई गयी हो पर अगर वह नियमानुसार यहां उठाई जा सकती थी तो आपने उस पर भी सभा की राय ली है। इस सीमा तक आपने यहां अपनी धीरता का परिचय दिया है। मैं उन लोगों को भी धन्यवाद दूंगा जिन्होंने संविधान की रचना का काम किया है। मैं धन्यवाद देता हूं डॉ. अम्बेडकर और श्री अल्लादि कृष्णस्वामी अय्यर को उनकी योग्यता के लिये, मैं धन्यवाद देता हूं श्री टी.टी. कृष्णमाचारी को, श्री सन्थानम को तथा औरों को उनकी लगन के लिये जिसके साथ कि संविधान निर्माण का काम किया है। मैंने चन्द नामों का ही यहां उल्लेख किया है पर इसका मतलब यह नहीं है कि और नाम उल्लेखनीय नहीं है। संविधान निर्माण के काम में दिलचस्पी रखने वाले सभी सदस्यों ने अपना काम सुचारू रूप से किया है। हम लोगों को यही आशा करनी चाहिये कि इतिहास में इस अवसर का उल्लेख स्वर्णाक्षरों में किया जायेगा और यह कहा जायेगा कि यह संविधान देश को वैभव और प्रतिष्ठा, सुख और समृद्धि तथा शांति और सन्तोष

प्रदान करने में सर्वथा सहायक सिद्ध हुआ। हमें सदा कृतज्ञतापूर्वक याद रखना चाहिये उस महापुरुष को जो यद्यपि पार्थिव रूप से हमारे बीच मौजूद नहीं है पर वस्तुतः अपने लेखों और भाषणों द्वारा तथा उस नवप्रेरणा और नवविचार द्वारा जिसका उसने समस्त देश में और सारी दुनिया में अपने आदर्शमय जीवन द्वारा प्रसार कर रखा था, आज भी हमारे भाग्य का निर्माण कर रहा है। आइये हम सब यही प्रयास करें कि दुनिया के देशों में शान्ति और सद्भावना स्थापित करने का श्रेय हमारे देश को प्राप्त हो जाये।

***श्री ओ.वी. अलगेशन** (मद्रासः जनरल): अध्यक्ष महोदय, मसौदा समिति को तथा अन्य सभी लोगों को जिन्होंने संविधान रचना के काम में योगदान दिया है, यहां जो धन्यवाद दिया गया है वह ठीक ही दिया गया है। ये सभी लोग हमारे धन्यवाद के पात्र हैं। अब हमें इस बात का मौक़ा न मिल सकेगा कि डॉ. अम्बेडकर को यहां अपनी बुलन्द आवाज में संविधान के उपबन्धों पर सहज बोधगम्य रूप से समझाते हुए सुनें और न इस प्रसंग में श्री टी.टी. कृष्णमाचारी की ही तीव्र पर सुमधुर आवाज सुनने को हमें अब मिलेगी जिसकी संविधान-निर्माण सम्बन्धी देन को सभी स्वीकार करते हैं।

संविधान के विरुद्ध एक आलोचना यह भी की गई है कि यह बहुत लम्बा हो गया है। किसी एक नमूने को लेकर चलने में सुविधा होती है तो असुविधा भी होती है। सुविधा यह होती है कि इससे हमें एक रास्ता मिल जाता है। इसमें असुविधा यह होती है कि इससे कुछ हद तक हम बंध जाते हैं और उस हद तक हमारी मौलिक गति भी अवरुद्ध हो जाती है। इसमें शक़ नहीं कि भारत-शासन अधिनियम को ही नमूना मान कर हमने संविधान की रचना की है और यह कहना गलत नहीं होगा कि अपना संविधान इस अधिनियम का ही एक भव्य संस्करण है। हां, इतना अन्तर अवश्य कर दिया है कि इस अधिनियम के अधीन सारी सत्ता निहित थी अंग्रेज़ों के हाथ में पर इस संविधान के अनुसार अब हमी लोग सारी बातों के मालिक हैं। हमारे देश में लोग रामायण और महाभारत जैसे महा काव्य पढ़ने के आदी हो गये हैं। सुतरां अपने संविधान को महाग्रंथ बनाने के लिये ही हमने अपनी परम्परा का ही पालन किया है। यदि अनुमति हो तो मैं कहूं कि इस इस लेख को लम्बा बनाने के लिये कुछ हद तक मसौदा समिति ही जिम्मेदार है। उन्होंने बुद्धिमत्ता इसी में समझी कि सभी बातों के लिये संविधान में ही उपबन्ध दिया जाये और आगे आने वाली सन्ततियों के ऊपर कुछ न छोड़ा जाये। उन्होंने इस बात की कोशिश की कि भविष्य में उठ सकने वाली सभी सम्भाव्य कठिनाइयों के लिये संविधान में उपबन्ध रख दिया जाये। उस कलाकार की तरह जो एक पूर्ण चित्र तैयार करने के लिये खाक़ा खींचता है और बार-बार उसमें कांट छांट करता है, मसौदा समिति ने भी, संविधान को पूर्ण बनाने के अभिप्राय से इसके मसौदे में बार-बार जोड़ घटाव और संशोधन किया है और ऐसा करने में सभा की ढिलाई से उसे बड़ा प्रोत्साहन मिला है। इन्हीं सब बातों का यह फल है कि इतना वृहत् संविधान हमें दिया गया है जिसमें विस्तार की बहुत सी बातें शामिल कर ली गई हैं जिनको कि हम भावी संसद पर आसानी से छोड़ सकते थे।

फिर एक आलोचना यह भी की गई है कि संविधान बनाने में हमने बड़ा समय लिया है। यह शिकायत सही नहीं है। यदि हम केवल उन्हीं दिनों को गिनें

[श्री ओ.वी. अलगेशन]

जितने दिन कि सभा की बैठक हुई है तो आप यह देखेंगे कि इस काम में कत्तई समय व्यर्थ नहीं गया है। पर अगर किसी को इतने पर भी इस बारे में कोई सन्देह है तो मैं उनसे यही कहूंगा कि पाकिस्तान के संविधान को याद कीजिये। हमसे कुछ ही अरसा बाद उन्होंने भी संविधान-निर्माण का काम प्रारम्भ किया था। उन्होंने अब तक कोई प्रगति नहीं कर पाई है जब कि हमने अपना संविधान तैयार कर लिया है और उसे लागू करने जा रहे हैं। इसे अलावा एक और भी जरूरी बात है जिसके लिये इस अवधि को जो कि संविधान तैयार करने में हमने लगाया हम लम्बी अवधि नहीं कह सकते हैं जैसा कि एक वक्ता ने बताया है इस तीन साल के अन्दर यहां समय स्थिर नहीं रहा है। बड़े बड़े क्रांतिकारी परिवर्तन या द्रुतपरिवर्तन—जैसा कि हमारे प्रधान मन्त्री जी कहा करते हैं—यहां इस बीच में होते रहे हैं। जब भारतवर्ष हमें सौंपा गया था उस समय राजनीतिक दृष्टि से वह एक नहीं था। उसी समय से देश के राजनीतिक एकीकरण का वृहत् कार्य इसके आर्थिक एकीकरण का सुदीर्घ कार्य प्रारम्भ किया गया है और आज भी यह काम जारी है। अतः संविधान निर्माण के साफल्य का श्रेय हमारे नेताओं को मिलना ही चाहिये और इसके लिये वस्तुतः वह हमारे धन्यवाद के पात्र हैं।

इन सभी बातों पर विचार करते हुए कोई भी यह नहीं कह सकता है कि संविधान तैयार करने में हमने आवश्यकता से अधिक समय लिया है और फिर संविधान ऐसा होना चाहिये जिसमें उसके निर्माण से पूर्व होने वाली क्रांति की भावनाओं को स्थान दिया गया हो और उनको सुरक्षित रखा गया हो। जहां तक अपने संविधान का सम्बन्ध है इसमें न केवल पूर्ववर्ती क्रान्ति की भावनाओं को स्थान ही दिया गया है बल्कि संविधान निर्माण काल में जो क्रांतिकारी परिवर्तन यहां होते रहे हैं उनको भी संविधान में एक सुव्यवस्थित रूप में शामिल कर लिया गया है। इसलिये, इस बात को देखते हुए तो अपना सर्वथा एक बेजोड़ संविधान है। इस संविधान पर हम गर्व कर सकते हैं।

इस समय जबकि इस संविधान को पाने पर सारा देश हर्ष मना रहा है, मैं सभा से यह अनुरोध करूंगा कि वह देशस्थित छोटे छोटे विदेशी इलाकों की तरफ भी ध्यान दे जो देश के राजनीतिक नक़शे को कुरूप किए हुए हैं। इन इलाक़ों में रहने वाले लोग हमारे ही भाई बहिन हैं और आज जब सारा देश हर्ष मना रहा है ये लोग इस खुशी में हिस्सा बटाने में असमर्थ हैं। एक कृत्रिम दीवार खड़ी करके इनको हमसे पृथक् कर दिया गया है। इन विदेशी इलाक़ों को संविधानाधीन लाने के लिये अगर मुझ से महीने तक और प्रतीक्षा करने को भी कहा जाये तो मैं उसे सहर्ष स्वीकार कर लूंगा और यह समय व्यर्थ न जायेगा। पर ऐसा होगा नहीं। हमें इसके लिये अभी और प्रतीक्षा करनी होगी। इस समय हम केवल यही आशा कर सकते हैं कि हमारे नेता जिनको अनेक साफल्य पाने का श्रेय प्राप्त हो चुका है इस प्रश्न को भी अविलम्ब हाथ में लेंगे और हमारे सन्तोषानुकूल एक समाधान निकालेंगे तथा हम भारतीयों को पृथक करने वाली इस कृत्रिम दीवार को वह खत्म करने की कोशिश करेंगे।

संविधान के विरुद्ध एक दूसरी गम्भीर आलोचना यह की गई है कि इसके अधीन अपना राज्य लोकतन्त्रात्मक से डिक्टेटर प्रधान बन जायेगा। इस तरह की

कल्पना का मैं तो कोई कारण नहीं देख पाता हूं। हमारा अपना अनुभव तो इस आशंका को मिथ्या ही सिद्ध करता है। हम यह देखते हैं कि केन्द्रीय तथा प्रान्तीय दोनों ही विधान मण्डलों में केवल एक दल—कांग्रेस दल का ही प्राधान्य है। विधान मण्डलों में कोई ऐसा विपक्षी दल संगठित नहीं हो पाया है जिसे विपक्षी दल की संज्ञा दी जा सके। विधान मण्डलों के बाहर, देश में जो विरोधी दल हैं वह बड़े ग़ैर जिम्मेदाराना ढंग से काम कर रहे हैं। एक दल, जो हिंसा और तोड़फोड़ के सिद्धान्त को अपनाये हुए है वह देश में अव्यवस्था पैदा करना चाहता है इस उद्देश्य से कि वह किसी तरह अधिकारारूढ़ हो जाये। एक दूसरा दल जो हिंसा को तो नहीं अपनाता है पर चूंकि उसे इस बात का पक्का विश्वास है कि निकट भविष्य में इसकी कत्तई कोई आशा नहीं है कि शासन की बागडोर संभालने का भार उसको सौंपा जा सकेगा, इसलिये वह तरह तरह के बड़े बड़े अव्यावहारिक नारे लगा कर बड़ी बड़ी दिखावटी बातें कह कर जनता को गुमराह करने की कोशिश कर रहा है। ऐसी स्थिति में कांग्रेस के सामने यह बड़ा प्रलोभन अवश्य है कि उसका दल डिक्टेटर की तरह शासन करे। पर वस्तुतः हम क्या देखते हैं? क्या कांग्रेस दल डिक्टैटरी आचरण कर रहा है? नहीं। बिना किसी खण्डन की आशंका के हम यह कह सकते हैं कि देश में अगर कोई दल है जिसने इतनी शक्ति रखने पर भी दूसरों के दृष्टिकोण का ख्याल रखा है और उनको माना भी है तो एक मात्र कांग्रेस दल ही है। इस देश में हमारे नेताओं की बात को जनता श्रद्धा से मानती है। दूसरे किसी देश में नेताओं को जनता का न इतना समर्थन प्राप्त है और न इतनी श्रद्धा। जनता उनकी बातों को मानती है। हमारे नेता अगर चाहते तो आसानी से यहां अपनी डिक्टैटरी व्यवस्था चला सकते थे और अगर उन्होंने ऐसा किया होता तो उस पर देश में विशेष आपत्ति भी नहीं उठती। पर उन्होंने ऐसा नहीं किया। उनका आचरण सदा लोकतन्त्रात्मक ही रहा। मैं कहता हूं कि अपने संविधान के लिये, देश की लोकतंत्रीय शासन व्यवस्था के लिये यह एक शुभ लक्षण की बात है। इस संविधान के अधीन अपने लोकतंत्र को किसी तरह का कोई खतरा नहीं आ सकेगा। और न डिक्टेटरी शासन का हमें डर हो सकता है। इस तरह की आशंका का कत्तई कोई कारण नहीं है। आखिर यह तो कोई भी नहीं कह सकता है कि संविधान में लिपिबद्ध किये गये शब्दों द्वारा लोकतन्त्र को सुरक्षा मिल ही जायेगी। अपने कथन की पुष्टि के लिये मैं आपके सामने केवल एक उदाहरण उपस्थित करता हूं। ब्रिटिश भारत और फ्रांसीसी भारत दोनों ही स्थानों में लोकतंत्रात्मक चुनाव अतीत में हुए हैं। यहां तत्कालीन शासन का विपक्षी दल चुनाव में जीत गया और विधान मण्डलों में उसे बहुमत प्राप्त हुआ। किन्तु फ्रांसीसी भारत में उस दल को जिसे तत्कालीन शासन का समर्थन प्राप्त नहीं था एक भी सीट नहीं मिल पाई। चुनाव का फैसला दोनों ही स्थानों पर वोटों से ही किया गया था पर एक जगह के विपक्षी दल बहुमत से जीता और दूसरी जगह के विपक्षी दल को एक जगह भी नहीं मिल पाई इसलिये यह बात नहीं कही जा सकती है कि संविधान में जो कुछ लिपिबद्ध किया गया है वह लोकतन्त्र को रक्षित ही रख सकेगा। लोकतन्त्र की सुरक्षा अधिक निर्भर करती है इस बात पर कि किस तरह और किस भावना के साथ उसे अमल में लाया जाता है न कि इस बात पर कि संविधान में उसके लिये परित्राण कितने रखे गये हैं। इस दृष्टिकोण से विचार करते हुए हम साहस से यह कह सकते हैं कि प्रस्तुत संविधान के अधीन लोकतंत्र के संकट में पड़ने की कतई कोई गुंजाइश नहीं है। इस संविधान के अधीन यहां की लोकतंत्रीय व्यवस्था ठीक तरह से चलेगी। यह तो कोई कह नहीं सकता है कि यह संविधान सर्वथा पूर्ण ही है। कोई भी

[श्री ओ.वी. अलगेशन]

संविधान पूर्ण नहीं हो सकता है और मैं तो यहां तक कहूंगा कि किसी भी संविधान का पूर्ण होना अपेक्षित भी नहीं है। सब कुछ निर्भर करता है इस बात पर कि संविधान पर अमल किस तरह किया जाता है। भोजन सुस्वादु है या नहीं इसका पता तो खाने से ही चल सकता है।

संविधान के विरूद्ध एक दूसरी आलोचना यह भी की जाती है कि इसमें ग्रामों को राजनीतिक इकाई नहीं माना गया है। मेरा ख्याल तो यह है वयस्क मताधिकार की व्यवस्था में अविश्वास का होना ही इस आलोचना का मुख्य कारण है। ग्रामों को इकाई बनाने की बात इसीलिये तो सोची गई थी कि गांव के मतदाता अपनी अपनी पंचायत का चुनाव करें और इन पंचायतों के सदस्य ही केन्द्रीय तथा प्रांतीय विधान मण्डलों के चुनाव में मतदान करें? किन्तु अब यह किया गया है कि गांवों के मतदाता ही सीधे अपने प्रतिनिधि चुनेंगे और खुद वही सभी मसलों को सोच समझ कर चुनाव का फैसला करेंगे। ग्राम इकाइयां पंचायत का चुनाव करें और पंचायर्तो के सदस्य विधान मण्डलों के लिये प्रतिनिधि चुनें यह व्यवस्था तो अप्रत्यक्ष निर्वाचन की व्यवस्था होगी और मैं दावे के साथ कह सकता हूं कि इस व्यवस्था से कहीं अधिक प्रगतिशील व्यवस्था है वह जो अब संविधान में रखी गई है। संविधान के विरुद्ध यही शिकायत नहीं की गई है। इसके विरुद्ध यह भी कहा गया है कि संविधान पर देश की संस्कृति की छाप नहीं पड़ी है। मैं नहीं समझ पाया हूं कि इस शिकायत का ठीक ठीक मतलब क्या है। यदि देश की संस्कृति की छाप का ही आपको इतना ख्याल है तो यहां संस्कृति से केवल राजतंत्र ही सदा अभिप्रेत रहा है। इस देश में सदा राजतंत्रीय व्यवस्था ही प्रचलित रही है। किन्तु आज के जमाने में गम्भीरता पूर्वक कोई यह सुझाव नहीं रखेगा। कि हम राजतंत्रीय व्यवस्था की ओर अब वापस चलें। तथ्य यह है कि इस व्यवस्था के जो भी चिन्ह यहां बच गये हैं उन्हें हम हटा देने की कोशिश कर रहे हैं। इसलिये यह शिकायत कि संविधान पर देश की संस्कृति की छाप नहीं पड़ी है बिल्कुल निरर्थक है। वस्तुतः इस अभियोग में भावुकता ही भावुकता है सार की कोई बात नहीं है। कोई भी देश इस बात का दावा नहीं कर सकता है कि धर्म दर्शन, राजनीति और समाज विज्ञान आदि सभी क्षेत्रों में वह सभी विचारों का आविष्कार कर चुका है। आखिर हर देश अपने ढंग से महान होता है और हर देश को दूसरे देशों से कुछ न कुछ अच्छी बात ग्रहण करनी ही पड़ती है। जिस तरह कि पाश्चात्य देशों को हमसे हमारे प्राचीन महर्षियों के धर्म एवं दर्शन सम्बन्धी विचारों को ग्रहण करना पड़ता है उसी तरह हमें भी अन्य देशों से राजनीति और समाज विज्ञान सम्बन्धी पद्धतियों को ग्रहण करना चाहिये। ऐसा करने में कोई खराबी नहीं है।

संविधान के विरुद्ध एक दूसरा आरोप यह भी लगाया गया है श्रीमान कि यह प्रतिबन्धों और परिमाणों से भरा हुआ है, यह व्यक्ति के स्वातन्त्र्य को कम करता है तथा प्रादेशिक इकाइयों के स्वातंत्र्य परिसीमित करता है। मैं इन प्रतिबन्धों को इस दृष्टि से नहीं देखता हूं। ये परिमाण संविधान में केवल चार दीवारी के रूप में रखे गये हैं इस अभिप्राय से कि अपनी नवप्राप्त स्वतन्त्रता और अपना नवजात लोकतन्त्र भयंकर पशुओं से सुरक्षित रह सके। आखिर चीता तो यह नहीं कह सकता है कि उसे इस बात की आजादी मिलनी चाहिये कि वह भेड़ों को मार

सके। जो यह नारा उठाया जाता है कि नागरिक स्वातन्त्र्य खतरे में है और इन प्रतिबंध मूलक उपबन्धों का इसके लिये हवाला दिया जाता है उसका यही जवाब मैं देता हूं। मेरे लिये तथा अनेक अन्य लोगों के लिये, जिन्हें यह अनुभव मिल चुका है नजरबन्दी क्या होती है, निवारक निरोध सम्बन्धी अनुच्छेद को स्वीकार करना है तो बड़ी जिल्लत की ही बात पर हमें यह भरोसा करना चाहिये कि इन उपबन्धों का बहुत कम ही प्रयोग किया जायेगा और उनको प्रयोग में लाने की तभी जरूरत समझी जायेगी जब कि कोई गम्भीर आपात की दशा उत्पन्न हो गई हो जिसमें समस्त समाज की स्थिरता ही विध्वंसक शक्तियों द्वारा संकट में पड़ गई हो।

इस संविधान में अपने धर्मनिरपेक्ष लोकतन्त्र की बुनियाद एक सुदृढ़ और सही नींव पर रखी गई है। अगर हम अपने प्रति, अपनी परम्परा के प्रति तथा अपने नेता महात्मा गांधी के सच्चे हैं तो हम विश्वास के साथ यह भरोसा कर सकते हैं कि उत्तरोत्तर हम समुन्नति करते जायेंगे और अपनी प्राचीन भूमि के लिये इस संविधान को प्रस्तुतः एक वरदान सिद्ध कर सकेंगे।

***अध्यक्षः** सभा की बैठक स्थगित करने से पहले मैं सभा को आगे के कार्यक्रम के बारे में एक आभास दे देना चाहता हूं। दोपहर बाद आज सभा दो घंटे के लिये बैठेगी और जिन सदस्यों को बोलने का मौक़ा नहीं मिला है आशा है वह उपस्थित होकर इस अवसर का उपयोग करेंगे। कल मध्यान्ह काल में तीन या साढ़े तीन बजे डॉ. अम्बेडकर बोलेंगे और इसके पहले मसौदा समिति का एक सदस्य थोड़ा समय लेंगे उन बातों का जवाब देने में जो बहस मुबाहिसे के दौरान में यहां उठाई गई हैं। बाकी समय सदस्यों को दिया जायेगा। आशा है आज दोपहर से लेकर कल तक जो भी समय मिल सकेगा उसमें सभा उन सब लोगों को बोलने का मौक़ा देने की सुविधा मुझे देगी जिन्होंने इसके लिये अपने नाम मेरे पास भेजे हैं। यह सम्भव है अगर सदस्यगण बोलने में उसी तरह औचित्य से काम लें जिस तरह कि उन्होंने आज किया है।

उसके बाद शनिवार को सवेरे मैं इस प्रस्ताव पर मत लेना चाहता हूं। प्रस्ताव के स्वीकृत हो जाने पर यहां सदस्यों के सामने मैं संविधान पर हस्ताक्षर करके उसके प्रमाणीकरण के कार्य को सम्पन्न करूंगा। पर प्रस्ताव पर मत देने से पहले अगर सदस्यों ने अनुमति दी तो चन्द शब्द मैं कहना चाहूंगा।

अब सभा स्थगित होती...

***श्री लक्ष्मी कान्त मैत्रः** (पश्चिमी बंगालः जनरल): संविधान के प्रमाणीकरण का अर्थ यही तो है कि उस पर सभी सदस्यों के हस्ताक्षर हो जायें?

***अध्यक्षः** नहीं यह बात नहीं है। मैं समझा देता हूं। संविधान में कुछ अनुच्छेद ऐसे हैं जो उसके स्वीकृत होते ही सद्य प्रभावी हो जायेंगे और शेष सभी अनुच्छेद प्रभावी होंगे 26 जनवरी को। इसलिये, ताकि उन अनुच्छेदों के अधीन काम किया जा सके जो संविधान के स्वीकृत होते ही प्रभावी होते, मुझे कल दोपहर को ही संविधान के प्रमाणीकरण का काम पूरा कर देना होगा और इसे कल दोपहर को कर दूंगा।

[अध्यक्ष]

विचार यह किया जा रहा है कि सभा का दूसरा सत्र 24 या 25 जनवरी को बुला लिया जाये। उसी दिन राष्ट्रपति का चुनाव किया जायेगा और सभी सदस्यों से मैं संविधान पर हस्ताक्षर करने को कहूंगा। विचार यह है कि उस दिन संविधान बिलकुल ऐसी सूरत में तैयार रहे कि सभी सदस्य उस पर अपने हस्ताक्षर कर सकें। पहले यहां इस आशय का एक सुझाव रखा गया था कि संविधान की हस्तलिखित प्रति को ही हमें यहां पास करना चाहिये। हस्तलिखित प्रति तैयार कराने के लिये कई सदस्यों ने मुझ पर जोर दिया था और तदनुसार एक लिपिक के द्वारा हस्तलिखित प्रति को उस समय तक तैयार कराने का प्रबन्ध हम कर रहे हैं। उस समय तक छपी हुई प्रतियां भी तैयार हो जायेंगी और सदस्य लोग हस्तलिखित प्रति पर अथवा छपी हुई प्रति पर या दोनों पर ही जैसा वह चाहें, अपने हस्ताक्षर कर सकते हैं। यह तो सम्भव नहीं हो सकेगा कि उस समय हम सभी सदस्यों को संविधान की एक एक प्रति सदस्यों के हस्ताक्षरयुक्त दे सकें। पर बाद में हम इस पर विचार कर लेंगे। अगर यह बहुत व्यय साध्य न हुआ, कि क्या प्रत्येक सदस्य को सदस्यों के हस्ताक्षर युक्त एक प्रति दे सकते हैं ताकि...

***श्री बी.एल. सौंधी** (पूर्वी पंजाब: जनरल): अगर सदस्य वृन्द ऐसी प्रति पाना चाहते हैं तो क्या इसके लिये वह खर्च नहीं कर सकते हैं?

***अध्यक्ष:** हम इस बात को भी ध्यान में रखेंगे और अगर सदस्य लोग कीमत देने पर तैयार हुए तो खर्च का कोई सवाल ही नहीं उठेगा।

***कतिपय माननीय सदस्य:** हां श्रीमान।

***श्री एल. कृष्णस्वामी भारती:** श्री सन्तानम् ने एक सुझाव यह रखा था प्रत्येक सदस्य को संविधान की एक प्रति ऐसी मिलनी चाहिये जिस पर अध्यक्ष के हस्ताक्षर हों। इस सुझाव के बारे में क्या तय हो रहा है श्रीमान्?

***अध्यक्ष:** इसके लिये मुझे लगभग तीन सौ प्रतियों पर हस्ताक्षर करने होंगे और मुझे इसमें कोई दिक्क़त नहीं होगी। हम ऐसा कर सकते हैं, इसमें कोई ज्यादा फ़रक़ तो नहीं पड़ेगा। मैं सोच रहा था उन प्रतियों के बारे में जिन पर सभी सदस्यों के हस्ताक्षर या उनके हस्ताक्षरों की फोटो रहेगी और जिन प्रतियों को सदस्य वृन्द सदस्य होने के नाते शायद रखना चाहेंगे।

अस्तु, फ़िलहाल यही कार्यक्रम हमने तय कर रखा है और मुझे आशा है कि हम लोग इसके अनुसार ही अपना सारा काम पूरा कर लेंगे और जो विचार मैंने अभी अभी प्रकट किये हैं उसे भी हम पूरा कर सकेंगे।

अब सभा कल दोपहर के तीन बजे तक के लिये स्थगित होती है।

इसके पश्चात् सभा मध्यान्ह कालीन भोजन के लिये तीन बजे तक के लिये स्थगित हो गई।

दोपहर के भोजन के पश्चात् तीन बजे माननीय डॉ. राजेन्द्र प्रसाद की अध्यक्षता में सभा पुनः समवेत हुई।

***श्री एल. कृष्णास्वामी भारती:** श्रीमान, भारत के इतिहास में ऐसी स्मरणीय घटनायें कभी नहीं हुई जो पिछले तीन वर्षों के इस अल्पकाल में यहां हुई हैं। विगत तीन वर्षों पर दृष्टि डालते हुए जबसे कि हमने संविधान बनाने के इस महान कार्य को आरम्भ किया प्रत्येक व्यक्ति उन परिवर्तनों से प्रभावित हुआ है जो हमारे देश के इतिहास में हुए हैं।

इस महत्वपूर्ण काल में पांच बड़ी बड़ी महत्वपूर्ण स्मरणीय घटनायें हुई हैं। वे घटनायें क्रम से इस प्रकार हैं: 1-हमारे देश का विभाजन, 2-स्वाधीनता प्राप्ति, 3-राष्ट्रपिता महात्मा गांधी का निधन, 4-देशी रियासतों के नाम से प्रसिद्ध राज्यों का एकीकरण और अन्तिम पर महत्व में किसी से कम नहीं 5-स्वतन्त्र भारत के संविधान की स्थापना।

इन विषयों को विस्तारपूर्वक मैं नहीं लेना चाहता हूं। इस संविधान पर बहुत से सदस्य भाषण दे चुके हैं। कुछ सदस्यों ने इसकी आलोचना की है और कुछ ने प्रशंसा। न तो किसी ने इस समूचे के समूचे संविधान को निन्दनीय बताया है और न किसी ने इसे पूर्ण रूप से स्वीकार ही किया है। यह सत्य है कि एक ऐसी सभा से, जैसी कि यह सभा है, सर्वसम्मत स्वीकृति प्राप्त करना सम्भव नहीं है। परन्तु फिर भी, श्रीमान, मैं समझता हूं कि हम यह दावा कर सकते हैं कि इस संविधान में सदस्यों में परस्पर किये गये करार का अधिकतम रूप वर्तमान है।

इस संविधान में कुछ विशेष बातें हैं, परन्तु यदि इस संविधान पर गांधीवादी आदर्श के मूलाधारों की दृष्टि से विचार किया जाये तो मुझे यह स्वीकार करना पड़ेगा कि यह उस आदर्श तक नहीं पहुंच सका है। कदाचित यह कहना तो ग़लत है कि इसमें गांधीवादी आदर्श की पूर्ण रूप से उपेक्षा की गई है, पर मेरा यह स्पष्ट विचार है कि गांधीवादी आदर्श के आधारभूत तथा मूल सिद्धान्त को इस संविधान में बेमन से हिचकते हुए तथा झिझकते हुये रखा गया है।

इतना समय नहीं कि विषय को विस्तारपूर्वक लिया जा सके। फिर भी कुछ दृष्टांत मैं प्रस्तुत करूंगा। राष्ट्रीय झंडे से चरखे का हटाना एक ऐसा ही उदाहरण है। मैं जानता हूं कि अपने मृत्यु समय तक महात्मा गांधी स्वयं इस परिवर्तन से सहमत नहीं हो सके थे। दूसरी बात यह है कि गांधी जी के लोकतन्त्र के विकेन्द्रीकरण के विचार को मूर्त्त रूप नहीं दिया गया है। जीवन की प्रमुख आवश्यकताओं—खाना और कपड़ा के सम्बन्ध में ग्रामीण स्तर की आर्थिक आत्म-निर्भरता के गांधी जी के आदर्श को न इस संविधान में रखा गया है और न उस पर ज़ोर दिया गया है। तीसरी बात यह है कि पदाधिकारियों का उच्च वेतन गांधी जी के दृष्टिकोण से सर्वथा विरुद्ध है। चौथी बात यह है कि नमक-कर संविधानिक रूप से प्रतिषिद्ध नहीं किया गया है और अन्तिम, पर अन्तिम होने से इसका महत्व कम नहीं हो जाता है, बात यह है कि राज्य की भाषा के सम्बन्ध में गांधी जी की इच्छाओं की पूर्ण उपेक्षा की गई है। इन विषयों के विस्तार में मैं नहीं जाना चाहता हूं।

[श्री एल. कृष्णस्वामी भारती]

हां, भाषा के प्रश्न पर मैं कुछ शब्द कहना चाहूंगा। यद्यपि मुझे प्रसन्नता है कि इस सभा ने सर्वसम्मति से उसे स्वीकार कर लिया है, परन्तु यदि शेक्सपीयर के उग्रतम भाव प्रकट करने वाले शब्दों के दुहरे प्रयोग को किया जाये तो राजभाषा के सम्बन्ध का संकल्प "सब घावों में एक बड़ा ही अधिकतम निर्दयतापूर्ण किया गया घाव" है। मुझे बड़ा खेद है कि इस सम्बन्ध में हम महात्मा गांधी के पथ पदर्शन को स्वीकार नहीं कर सके। गांधी जी की राजभाषा की परिभाषा यह थी कि वह एक ऐसी भाषा होनी चाहिये जो "उत्तर भारत की अधिकांश जनता में साधारणतया बोली और सरलता से समझी जाती हो" जो न तो अधिक संस्कृतनिष्ठ और न अधिक फारसी मिश्रित हो अर्थात्, मिली जुली हिन्दी और उर्दू—हिन्दुस्तानी हो। मैं यह नहीं जानता हूं कि हिन्दी के समर्थकों द्वारा इस आदर्श का कितना परिपालन किया जा रहा है। मेरा निजी विचार यह है कि वे परिपालन नहीं कर रहे हैं बल्कि शायद विपरीत दिशा में जा रहे हैं। मुझे एक बड़ी रोचक पुस्तक पढ़ने को मिली जिसमें बड़ी लाभदायक बातें थीं। भाषाओं के महान् विशेषज्ञ ग्रियर्सन ने अपनी महान कृति 'लिंग्युस्टिक सर्वे ऑफ इण्डिया' में कुछ बड़ी लाभदायक तथा महत्वपूर्ण बातें कहीं हैं। उनका विचार यह है कि भाषा की उन्नति जन समुदाय को ध्यान में रखते हुए करनी चाहिये। संस्कृतनिष्ठ भाषा बनाने के प्रयत्न से विद्वान तथा साधारण लोगों में परस्पर अन्तर उत्पन्न हो जायेगा—और इसी विचार के महात्मा गांधी कट्टर समर्थक थे। वे बनारस के एक अति वृद्ध संस्कृत प्रोफ़ेसर का उदाहरण देते हैं "जब कभी कोई हिन्दी लेखक अपने हाथ में लेखनी लेता है तो वह गम्भीरता को तिलांजलि दे देता है और संस्कृत के मद में चूर हो जाता है।" मैं यह नहीं जानता हूं कि यह बात कहां तक ठीक है, पर मेरा व्यक्तिगत अनुभव यह है कि हिन्दी के कुछ समर्थकों में हिन्दी के प्रति इतना अधिक प्रेम है कि कभी कभी वे गम्भीरता की परिधि को भी लांघ जाते हैं। मैं यह नहीं जानता हूं कि राज भाषा के वर्तमान नाम को स्वीकार कर लेने के लिये हम अपने हिन्दी के समर्थक मित्रों को बधाई दें या न दें चूंकि हिन्दी फ़ारसी शब्द है और इस सूचना के लिये मैं उस महान भाषाविद् ग्रियर्सन का ऋणी हूं। कदाचित इस नाम के स्वीकार करने से यह प्रकट हो सकता है कि आखिर हिन्दी के समर्थक इतने उर्दू-विरोधी तथा फ़ारसी-विरोधी नहीं हैं जितना उनको कहा जाता है।

भाषा सम्बन्धी अनुच्छेद गम्भीर तथा सावधानीपूर्ण विचार का परिणाम स्वरूप है। हमने उसे स्वीकार कर लिया है और हम दक्षिण वाले आपको यह आश्वासन देते हैं कि हम उसका पालन करेंगे। एक राष्ट्र के रूप में भारत की एक भाषा होनी चाहिये और भारत की भाषाओं में से महात्मा गांधी द्वारा परिभाषित रूप में हिन्दी वह भाषा होनी चाहिये। इस विषय पर न दो राय हो सकती हैं और न होनी चाहिये। परन्तु इससे अधिक महत्वपूर्ण बात है इस विषय के प्रति दृष्टिकोण। हम दक्षिण भारत वालों को इससे हानि होगी। हिन्दी को राजभाषा के रूप में ग्रहण करना उत्तर भारत के लोगों के लिये सरल होगा क्योंकि दैवयोग से वह उनकी मातृभाषा है। हिन्दी के पुर:स्थापन के विरोध में दक्षिण में एक आन्दोलन चल रहा है, पर हमें वहां जाकर लोगों को यह समझाना चाहिये कि इससे उनकी मातृभाषा नहीं हटाई जायेगी। श्री पत्तम थानू पिल्ले ने आज प्रात: काल इस विषय की ओर

निर्देश किया था। मैं यह नहीं जानता हूं कि त्रिवेन्द्रम में क्या हो रहा है, पर जहां तक मेरे प्रान्त का सम्बन्ध है मुझे प्रसन्नता है कि हमने संविधान में यह रख दिया है कि हिन्दी का विचार और उसको पुर:स्थापन करने की आवश्यकता प्रादेशिक भाषा के लिये हानिकर सिद्ध नहीं होगी। प्रादेशिक भाषायें पूर्णरूप में बनी रहेंगी। केवल अखिल भारतीय प्रयोजनों के लिये हमें एक भाषा की आवश्यकता है और केवल हिन्दी ही यह भाषा हो सकती है। पर आज प्रात:काल श्री पत्तम थानू पिल्ले यह कहा था कि हम अपने अपने क्षेत्रों में हिन्दी रख सकते हैं। अवश्य, वे उसे त्रिवेन्द्रम या कोचीन और तिरुवांकुर के संयुक्त राज्य में रख सकते हैं।

***श्री पी.टी. चक्को:** वहां भी ऐसे ही विचार हैं, भ्रम में न पड़िये।

***श्री एल. कृष्णस्वामी भारती:** यह जान कर मुझे खुशी हुई है। यही बात ठीक है और हम केवल इस बात की मांग कर सकते हैं कि यद्यपि प्रान्त अपनी भाषा रख सकते हैं, पर उन्हें सम्पूर्ण राष्ट्र का ध्यान रखते हुए प्रकार्य करना चाहिये; राष्ट्र-भाषा के हितों के लिये हानिकर रूप में अन्य भाषाओं को नहीं होना चाहिये। भारत के लिये पत्र व्यवहार केवल हिन्दी ही में हो सकता है। वह किसी अन्य भाषा में नहीं हो सकता है। जिन लोगों पर तमिलनाडु और आंध्र प्रदेश इत्यादि के प्रशासन का उत्तरदायित्व है वे केवल हिन्दी में ही भारत से पत्र व्यवहार कर सकते हैं। अत: हम लोगों से जाकर यह कहेंगे कि हिन्दी स्वीकार कर लेने में कोई त्रुटि नहीं हुई है। वे हर प्रकार से अपनी अपनी प्रादेशिक भाषाओं की उन्नति कर सकते हैं और उन भाषाओं में अपना काम कर सकते हैं, पर उनकी एक राष्ट्र भाषा होनी चाहिये। इसमें आरोपण का कोई प्रश्न नहीं है। यह एक बहुत ही महत्वपूर्ण बात है जिसे मेरे उत्तर भारत के मित्रों को समझ लेना और समझा देना चाहिये। यह एक कठिन कार्य है। हम लोगों को यह समझा सकते हैं कि इसमें कोई त्रुटि नहीं है। पर श्री पत्तम थानू पिल्ले जैसे सदस्यों के भाषण बहुत ही भ्रमपूर्ण विचार उत्पन्न करेंगे। हमें लोगों से यह कहना पड़ेगा कि यह उनकी अपनी सम्मति है। तिरुवांकुर के एक और सदस्य ने भी यह कहा है कि तिरुवांकुर में वही विचारधारा है जो मैं ने प्रकट की है। मेरे ये विचार सुस्पष्ट हैं कि हमारा उद्देश्य यह नहीं है कि हम मातृभाषा को हानि पहुंचायें और न यह है कि राजभाषा को ही हानि पहुंचायें।

***श्री ए. थानू पिल्ले:** मैं अपने मित्र को यह सूचित करना चाहता हूं कि यदि उन्होंने मेरी बात का यह अर्थ लगाया है कि हिन्दी मातृभाषा के हितों के लिये हानिकर सिद्ध होगी तो उन्होंने गलत समझा है। जो कुछ मैंने कहा था वह यह है कि प्रशासन कार्य के उच्चतर स्तर में हिन्दी को ग्रहण करना चाहिये। इसका अर्थ वह नहीं है जो उन्होंने समझा है।

***श्री एल. कृष्णस्वामी भारती:** मेरा विचार यह है कि जब कोई भाषा राजभाषा हो जाती है तो चाहे यह अभिप्राय न हो पर फिर भी वह मातृभाषा के लिये हानिकर हो सकती है। जब राजभाषा अंग्रेज़ी थी तो भारत की अन्य भाषाओं के लिये वह बहुत ही हानिकर सिद्ध हुई तथा अन्य क्षेत्रों में भी वह मातृभाषा के लिये हानिकर हुई। केवल इसी भाव से मैंने यह कहा था कि प्रान्तों के प्रशासन में हिन्दी पुर:स्थापित करने का परिणाम यह होगा कि वह प्रान्तों की मातृभाषाओं के लिये हानिकर होगी। भाषावार प्रान्त बनाने का विचार प्रान्तों की मातृभाषाओं

[श्री एल. कृष्णस्वामी भारती]

का पोषण करने के लिए है। कुछ लोग समझते हैं कि यह विचार राष्ट्र-विरोधी है। इसके विपरीत मेरा यह विश्वास है कि यह विचार पूर्णतया राष्ट्रीय हितों से संगत है। कांग्रेस के हित के लिये हम भिन्न-भिन्न क्षेत्रों में कार्य करते हैं और केवल प्रादेशिक भाषाओं में ही लोगों से अपील करते हैं। प्रशासन कार्य का संचालन जनता की भाषा में होना चाहिये जिससे कि शासक और शासितों के हित और विचार में एकरूपता हो। इस ख्याल से मैंने यह कहा था कि हमें प्रादेशिक भाषायें रखनी चाहिये। मूलरूप में यही भाषावार प्रान्तों के बनाने का आधार है। इसका अर्थ विघटन या प्रान्त विशेष अथवा प्रदेश विशेष के हितों के लिये कार्य करना नहीं है।

इसके बाद अंकों का प्रश्न आता है। इस प्रश्न को जिस रूप में हल किया गया है उसका हमें गौरव है। मेरे माननीय मित्र श्री जसपतराय कपूर ने कहा था कि अंग्रेज़ी के अंक हैं और मैंने यह कह कर उनको टोका था कि अब उन्हें अंग्रेज़ी अंक कहना ग़लत है। वे वास्तव में भारतीय अंक हैं। इन अंकों का मूल रूप भारतीय है। अपने इस विचार के समर्थन में मैं इस तथ्य की ओर निर्देश करूंगा कि 2000 वर्ष पूर्व के अशोक स्तम्भ में, नानाघाट के शिला लेखों में और नासिक की गुफ़ाओं में ये सब अंक मिलते हैं। एक, चार और छः अंक अशोक स्तम्भ में मिलते हैं, दो, चार और सात नाना घाट के शिलालेखों में मिलते हैं और शेष अंक पहली और दूसरी शताब्दि की नासिक की गुफ़ाओं में मिलते हैं। ये रूप इन अंकों के वर्तमान रूपों से बहुत कुछ मिलते हैं। अतः यह कहना कि ये अंक अंग्रेज़ी के हैं ठीक नहीं है। श्री कपूर ने यह कहा था कि जिन सदस्यों ने इन अंकों का समर्थन किया था उन्होंने इस तथ्य को इस विषय पर वाद विवाद आरम्भ हो जाने के बाद मालूम किया था। श्रीमान, सदस्यों को यह जान कर कदाचित् प्रसन्नता होगी कि हमारे प्रधानमंत्री पण्डित जवाहरलाल नेहरू ने कुछ वर्ष पूर्व के लेखों में इस विषय के इस पहलू का निर्देश किया है। वह बड़े ही रोचक ढंग से हैं। उन्होंने इन अंकों को 'अपने भारतीय अंक' कहा है। श्रीमान, पृष्ठ 248 पर...

***अध्यक्षः** क्या मैं माननीय सदस्य को यह याद दिला सकता हूं कि यदि वे इसी प्रकार से भाषण देते रहेंगे तो अन्य सदस्यों को अपनी बात कहने के लिये समय बड़ी कठिनाई से मिलेगा।

***श्री एल. कृष्णस्वामी भारतीः** श्रीमान, मैं अपना भाषण शीघ्र ही समाप्त करने वाला हूं। इस सम्बन्ध में पण्डित नेहरू के विचार बड़े रोचक हैं। पंडित जी ने कहा है "गणना शैली और उसके प्रयोग की कठिन प्रणाली और रोमन तथा अन्य इसी प्रकार के अंकों का प्रयोग बहुत समय तक उन्नति में बाधक रहा जब तक कि शून्य सहित दस अंकों ने इन कठिनाइयों से मनुष्य को मुक्त न किया और अंकों के व्यवहार पर पर्याप्त प्रकाश न डाला। ये अंक चिन्ह अन्य देशों में प्रयुक्त सब चिन्हों से पूर्णतया भिन्न तथा विलक्षण हैं। आज भी उनका प्रयोग पर्याप्त रूप में मिलता है और हम उन रूपों को स्वीकार करते हैं।" श्रीमान, मैं सिर्फ कुछ चन्द मिनट और लूंगा।

इस संविधान में एक मुख्य बात पृथक् निर्वाचनों का अन्त करना है। मुझे खुशी है कि भिन्न भिन्न सम्प्रदायों के प्रतिनिधियों की सम्मति के आधार पर यह कार्य हुआ है। विधान-मंडलों में विशेष प्रतिनिधान को छोड़ने के लिये सहमत होने पर

मुस्लिम सम्प्रदाय के सदस्यों को मैं विशेषकर बधाई देता हूं। यह कोई तुच्छ विषय नहीं है और ऐसा करना समय के अनुकूल है। यह प्रश्न उठना स्वाभाविक है जब यह वास्तव में क्रियान्वित किया जायेगा तो इस पर नेता और हमारी जनता कहां तक अमल करेंगे। क्या हमें इस बात का विश्वास है कि बहुसंख्यक सम्प्रदाय ने साम्प्रदायिकता को छोड़ दिया है और इस कारण अन्य सम्प्रदायों के अभ्यर्थियों को उनके धर्म का विचार किये बिना चुन लिया जायेगा? इसका उत्तर भविष्य पर निर्भर करता है। मेरी बड़ी इच्छा है कि बहुसंख्यक सम्प्रदाय इस विषय पर सही रूप में अमल करे। साथ ही साथ अल्पसंख्यक सम्प्रदाय पर यह एक बड़ी भारी ज़िम्मेवारी आ गई है कि वे इस प्रकार से व्यवहार करें कि अन्य सम्प्रदायों का उनमें विश्वास हो। यह केवल तभी हो सकता है जब कि वह राजनैतिक दृष्टि से शेष जनसंख्या में मिल जाये और सम्प्रदाय के आधार पर राजनैतिक संघटनों द्वारा साम्प्रदायिकता को न बनाये रखे। मैं समझता हूं कि अब समय आ गया है कि मुस्लिम लीग राजनैतिक संघटन के रूप में समाप्त हो जाये और राजनीति शून्य क्षेत्र में कार्य करे। इस संघटन को राजनैतिक रूप छोड़ देना चाहिये। मुझे दु:ख है कि इस प्रकार का वातावरण बनाने में पाकिस्तान हमारे लिये कठिनाई पैदा कर रहा है। परन्तु, जैसाकि महात्मा गांधी ने कहा है, उनकी बुरी बातों की हम नक़ल न करें। मैं आशा करता हूं कि ऐसा आवश्यक वातावरण पैदा किया जायेगा जिसमें पुन: साम्प्रदायिक द्वेष पैदा करने के लिये कोई साम्प्रदायिकता के आधार पर राजनैतिक संघटन नहीं होगा। श्रीमान, मुझे स्मरण है कि हमारी सरकार ने महात्मा गांधी की मृत्यु के पश्चात् तुरन्त ही एक इस प्रकार का संकल्प पारित कर दिया है। मैं आशा करता हूं कि ये लोग इस संकल्प का संपालन करेंगे और अन्य लोग किसी भी साम्प्रदायिक संघटन को राजनैतिक क्षेत्र में सफल नहीं होने देंगे।

श्रीमान, वयस्क मताधिकार का विषय इस संविधान की एक और मुख्य बात है। मैं इसका स्वागत करता हूं। एक ऐसे देश में जहां जनता का अधिकांश भाग निरक्षर है इस बात में शंका की जाती है कि क्या हम सही रूप में कार्य करने के लिये उनमें विश्वास कर सकते हैं। मेरा निजी अनुभव यह है कि ठीक व्यक्ति या ठीक पक्ष पहचान लेने की जनता में स्वाभाविक शक्ति तथा बुद्धिमत्ता होती है। परन्तु एक बात स्पष्ट है कि यदि लोकतन्त्र को सफल रूप में क्रियान्वित करना है तो यह आवश्यक है कि अधिकांश जनता साक्षर हो। और तभी लोगों के विचारों की झलक सरकार में दिखाई देगी। पर श्रीमान, निर्वाचन ऐसे नहीं होते हैं जैसे कि वे होने चाहिये। विधान सभा के एक बड़े संघर्षमय निर्वाचन में मैं अभ्यर्थी रह चुका हूं और उसमें मेरी विजय हुई। मैंने यह देखा है कि यह एक दुर्भाग्य की बात है कि अधिकांश लोग झूठा मत देते हैं। यह अधिकतर पाया जाता है कि एक व्यक्ति दूसरे व्यक्ति का मत देता है। एक व्यक्ति 15 या 20 अन्य व्यक्तियों का मत देकर मतों की संख्या बढ़ाता है। एक माननीय सदस्य ने मुझे यह बताया कि एक स्त्री ने 13 अन्य स्त्रियों के मत डाले। मैंने स्वयं लोगों को यह कहते सुना कि उन्होंने एक दर्जन से अधिक लोगों के मत डाले। यह बड़ा दु:ख का विषय है। जब तक इस बुरी प्रथा को रोका नहीं जायेगा तब तक लोकतंत्र निरर्थक रहेगा। इस प्रकार से किसी भी अभ्यर्थी के मतों की संख्या बढ़ाई जा सकती है पर इससे जनता की सदिच्छा नहीं जानी जा सकती।

(इस समय अध्यक्ष ने घंटी बजाई।)

श्रीमान मैं समाप्त कर रहा हूं।

***अध्यक्ष:** आपने पच्चीस मिनट से अधिक समय ले लिया है।

***श्री एल. कृष्णस्वामी भारती:** मुझे खेद है। मैं शीघ्र ही समाप्त कर दूंगा। अत: मैं चाहता हूं कि यदि हो सके तो मतदान को त्रुटिशून्य बना देना चाहिये। मैं समझता हूं कि यह हो सकता है और इस लिये मेरा सुझाव यह है: मतदाताओं को चित्र सहित परिचय-पत्र दे देना चाहिये। यह ठीक है कि लोग कई तरह की आपत्तियां करेंगे पर इस महत्वपूर्ण विषय पर विचार करने के लिये मेरे पास समय नहीं है। यदि परिचय पत्र पहले से दे दिये जाते हैं तो कोई मतदाता किसी अन्य मतदाता का मत नहीं डाल सकता है।

मैं एक और सुझाव देना चाहूंगा, वह यह है। जब कोई मतदाता अपना मत डालने आये तो उसकी अंगुलियां किसी ऐसी पक्की स्याही से रंग दी जाये जो एक या दो दिन तक न मिट सके। इससे यह प्रकट हो जायेगा कि वह अपना मत दे चुका है। इन सुझावों पर विचार किया जाये।

अन्त में, मेरा अनुभव यह है कि हम गांधी के आदर्श पर आश्रित इससे अच्छा संविधान बना सकते थे। सम्भवत: इस कथन से सांत्वना मिले कि राष्ट्र को वही मिलता है जिसके वह योग्य है। मैं यह आशा करता हूं, मुझे यह विश्वास है और मैं यह प्रार्थना करता हूं कि इस संविधान के व्यवहार में प्रस्तावना में दिये हुए इस संविधान के उद्देश्यों का पूर्णतया पालन होगा जिससे कि इस देश में सुख, शान्ति और सम्पन्नता का साम्राज्य हो।

श्री रतन लाल मालवीय (सी.पी. एण्ड बरार स्टेट): सभापति महोदय, विधान पर इतने भाषण हो चुके हैं कि उनके बाद उन बातों पर मुझे कुछ बोलने की आवश्यकता नहीं है। मैं विधान के सिर्फ़ उन पहलुओं पर प्रकाश डालने की कोशिश करूंगा जो अभी तक अछूते हैं। मेरा मतलब स्टेटों से है।

जहां तक स्टेटों का ताल्लुक़ है मैं छत्तीसगढ़ की रियासतों का प्रतिनिधि हूं और मुझे यह गौरव है कि स्टेटों का इतिहास जहां से शुरू होता है उसका श्रेय छत्तीसगढ़ और उड़ीसा की स्टेटों को जाता है। सबसे पहले 14 दिसम्बर और 15 दिसम्बर 1947 को इन्हीं स्टेटों से भारत की स्टेटों के मरजर का श्रीगणेश हुआ था। उसके बाद इन दो सालों में जो परिवर्तन स्टेटों में हुआ है वह तो छिपा नहीं है। 562 रियासतें एक सूत्र में बंध गई हैं। मर्ज्ड और सैंट्रली एडमिनिस्टर्ड स्टेट्स और यूनियनों के रूप में अलग अलग प्रान्तों में वह स्टेट्स मिल गई हैं और इससे देश के एकीकरण में बड़ा फ़ायदा हुआ है। इनमें से जहां तक सैंट्रली एडमिनिस्टर्ड स्टेट्स का ताल्लुक़ है प्रेसीडेंट महोदय सेंटर ने उनकी पूरी ज़िम्मेवारी ले ली है और जो दूसरी तरह की स्टेट्स हैं जो कि युनियन्स में शामिल हुई हैं उनके लिये भी एक विधान है और प्रेसीडेंट ने दफ़ा 371 के मुताबिक़ उनकी ज़िम्मेवारी अपने ऊपर ले ली है और दस साल तक प्रेसीडेंट उनकी देख रेख करेंगे। हमारे मैसूर और ट्रावनकोर के भाइयों ने इस दफ़ा का विरोध किया है। हो सकता है कि उनका विरोध किसी हद तक ठीक हो क्योंकि ट्रावनकोर और मैसूर की रियासतें सन् 1947 के पहले या यूनियन बनने के पहले प्रान्तों से बहत आगे बढ़ी हुई रियासतें थीं। उनमें बड़ी शिक्षा थी, बड़ा उद्योगधंधा था और इस लिये वह रियासतें प्रान्तों से भी ऊंची मानी जाती हैं। जैसा कि हमारे दोस्त थानू पिल्ले ने कहा है कि विधान की दफ़ा 371 के अनुसार जो यूनियनों के शासन

हैं गवर्नमेंट का हाथ है, उसका अलटा असर यह न हो कि रियासतों की उन्नति प्रान्तों के मुआफ़िक़ करने के उद्देश्य से उनकी तरक्क़ी में भी फ़र्क़ कर दिया जाये। मगर मैं यह बताना चाहता हूं कि यह दफ़ा बहुत ज़रूरी थी। अगर ट्रावनकोर और मैसूर की रियासतों को निकाल दिया जाये तो फिर दूसरी इतनी गई गुज़री हैं, इस क़दर पिछड़ी हुई हैं कि वहां गवर्नमेंट का हाथ जब तक दस साल तक नहीं रहेगा तब तक वहां तरक्क़ी की कोई खास उम्मीद नहीं की जा सकती। इसलिये दफ़ा 371 कांस्टीट्यूशन में बहुत पिछड़ी हुई रियासतों के लिहाज़ से बहुत फ़ायदे की है और उसका होना बहुत ही ज़रूरी था।

जहां तक मर्ज्ड स्टेट्स का ताल्लुक़ है दफ़ा 290 गवर्नमेंट ऑफ इण्डिया ऐक्ट की तरमीम के मुताबिक़ उनका प्रबन्ध प्रान्तों को सौंप दिया गया है। मगर मैं यह चाहता था कि जिस तरह से यूनियन्स के लिये दफ़ा 371 बनाई गई थी, इस दफ़ा 371 का उपयोग दस साल तक इन मर्ज्ड स्टेट्स के लिये भी होता, जिससे कि गवर्नमेंट को इनकी रियाया की हालत का पता लगता रहता और उसकी उन्नति में प्रेसीडेंट का हाथ होता।

प्रेसीडेंट महोदय, मैं यह बता देना चाहता हूं कि जब मैं यह कहता हूं कि दफ़ा 371 के मुआफ़िक़ मर्ज्ड स्टेट्स के ऊपर गवर्नमेंट की निग़ाह रहनी ज़रूरी है उस वक्त मैं प्राविंशियल गवर्नमेंट्स के ख़िलाफ़ यानी बिहार, उड़ीसा और सी.पी. की गवर्नमेंट्स के ख़िलाफ़ कोई सेंसर मोशन नहीं ला रहा हूं। जो हमारे नेता इन प्रान्तों में शासन की बागडोर संभाले हुए हैं उनके ख़िलाफ़ यह अविश्वास का प्रस्ताव नहीं है। वह माने हुए लोग हैं, उन्हें हम श्रद्धा की दृष्टि से देखते हैं, मगर यह बात ज़रूरी है कि रियासतों की देखरेख अभी होनी चाहिये थी। अभी दो सालों में जो कुछ हुआ है उससे तसल्ली नहीं होती है और इसलिये यह ज़रूरी मालूम होता है कि कुछ दिनों के लिये अगले पांच या दस साल तक अगर दफ़ा 371 की रू से नहीं तो वैसे ही प्रेसीडेंट अपनी ज़िम्मेवारी से उनके ऊपर निगाह रखें।

अब मैं खास तौर से प्रकाश डालना चाहता हूं सी.पी. की रियासतों के ऊपर क्योंकि मैं सी.पी. से आता हूं। जहां तक सी.पी. की स्टेटों का ताल्लुक है, प्रेसीडेंट महोदय, इन रियासतों की आबादी 28 लाख के क़रीब है और उसमें से साढ़े चौदह लाख आदिवासी हैं। शिड्यूल 6 के मुताबिक़ इन आदिवासियों की ज़िम्मेवारी प्रेसीडेंट ने ले रखी है और इस तरह से मर्ज्ड होते हुए भी और दफ़ा 290 के मुआफ़िक़ प्रान्तीय शासन का पूरा हाथ इन लोगों के ऊपर होते हुए भी मैं यह कहना चाहता हूं कि केन्द्रीय शासन की ज़िम्मेवारी किसी तरह से टल नहीं सकती। मैं एक उदाहरण देकर आपको साफ़ कर देना चाहता हूं।

माननीय प्रेसीडेंटः शायद शिड्यूल 5 से आपका मतलब है?

श्री रतन लाल मालवीयः जी हां। तो एक उदाहरण के बतौर मैं यह बता देना चाहता हूं कि दफ़ा 290 के पास होने के पहले हमने बड़ी कोशिश की थी कि प्राविंशयल लैजिस्लेचर में हमारे प्रतिनिधि लिये जायें, लेकिन जब तक 290 पास नहीं हुई तब तक हमारे प्रतिनिधि सी.पी. असेम्बली में नहीं लिये गये। बाद में जब प्रान्तीय असेम्बली में प्रतिनिधि नामजद हुए तो यह भी जरूरी था कि रियासतों से कम से कम एक मिनिस्टर होता। मैं खर साहब से मिला। उन्होंने

[श्री रतन लाल मालवीय]

मुझे बतलाया कि बम्बई में दो मिनिस्टर लिये गये हैं। समाचार पत्रों में पढ़ा और जानकारी हासिल की तो मुझे मालूम हुआ है कि उड़ीसा में भी तीन मिनिस्टर लिये जाने वाले हैं। मगर सी.पी. के बारे में अखबारों में तो खबरें ज़रूर निकलीं मगर ऐसी कोई तजवीज़ मुझ को नहीं मालूम होती कि कोई मिनिस्टर सी.पी. की रियासतों से भी लिया जायेगा। मैं यह स्पष्ट कर देना चाहता हूं कि मैंने जो कुछ कहा है वह सी.पी. की गवर्नमेंट के खिलाफ वोट आफ़ सेंसर नहीं है। मगर मैं यह कहना चाहता था कि आजकल जो सी.पी. के मिनिस्टर हैं उनका खास ताल्लुक रियासतों से नहीं रहा है और उनका सीधा ताल्लुक़ न होने से रियासतों की शिक़ायतें दूर होने में बड़ी देर होती है। ठीक प्रतिनिधित्व न होने की वजह से पिछड़ी हुई रियासतों के लोगों की पहुंच कैबिनेट तक नहीं है। इस लिहाज़ से यह जरूरी हो जाता है कि सी.पी. स्टेट्स में से एक मिनिस्टर ज़रूर रहे।

एक बात मैं और बतलाना चाहता हूं और वह है आदिवासियों के बारे में। जैसाकि मैं ने बतलाया कि 50 प्रतिशत से भी ज्यादा आदिवासी सी.पी. में बसते हैं। ठक्कर बापा की देखरेख में और उनकी कृपा से खासतौर से एक योजना उनके लिये बनाई गई है और वह योजना लागू भी हो गई है। पर वह योजना उसी वक्त पूर्ण रूप से सफल होगी जब कि हमारी स्टेटों के मिनिस्टर कैबिनेट में जायेंगे और वे इस योजना को संभालेंगे। मैं ठक्कर बापा को इस बारे में धन्यवाद देता हूं।

एक बात जो अभी ताजी है मैं उसे आपके नोटिस में लाना चाहता हूं वह है विन्ध्य प्रदेश के बारे में। विन्ध्य प्रदेश छत्तीसगढ़ से लगा हुआ है और खास तौर से जहां से मैं आता हूं वहां से विन्ध्य प्रदेश की सरहद 4 मील की दूरी पर है। मेरा ताल्लुक विन्ध्य प्रदेश की राजनीति से थोड़ा बहुत है और मैं जानकारी भी काफी रखता हूं। वहां के वातावरण के बारे में जो कुछ भी अखबारों में निकलता है उनका मुझे ज्ञान भी है। वहां की राजनीति में किस प्रकार की छीछालेदर हो गई है वह भी मैं जानता हूं। विन्ध्य प्रदेश की एरिया और आबादी इतनी कम है कि वह एक स्वतन्त्र रूप से उन्नति नहीं कर सकता। उसका मर्जर होना जरूरी है। जहां तक मैं वहां के लोगों के बारे में जानता हूं वहां दो प्रकार के ग्रुप हैं। एक मरजर के खिलाफ़ है उनकी तादाद बहुत ज्यादा है और दूसरा जो मरजर चाहता है। उनकी तादाद बहुत कम है। जैसा कि मैंने बतलाया मरजर विन्ध्य प्रदेश का जरूर होना चाहिये। मगर अखबारों की खबरों से पता चलता है कि विन्ध्य प्रदेश के टुकड़े होने वाले हैं। कुछ हिस्सा तो यू.पी. प्रान्त में चला जायेगा और कुछ हिस्सा सी.पी. प्रान्त में मिला दिया जायेगा। जहां तक मेरा ख्याल है यह ठीक बात नहीं है। इससे वहां के लोगों में अश्रद्धा पैदा हो जायेगी और इसके साथ ही साथ वहां पर अशान्ति फैलाने का भी डर है। इसलिये बेहतर यह होगा कि विन्ध्य प्रदेश को मरजर तो कर देना चाहिये मगर ऐसी स्टेटें जो पौकेट स्टेट्स हैं उनको तो यू.पी. में मिला देना चाहिये और बाकी स्टेटों को सी.पी. में मिला देना चाहिये।

अन्त में सभापति महोदय, मैं अपना छोटा सा वक्तव्य आपको धन्यवाद दिये बिना समाप्त नहीं कर सकता। मैं अपनी श्रद्धांजलि पूज्य बापू को भी समर्पित किये

बिना अपना भाषण समाप्त नहीं कर सकता। जैसा कि हमने आजादी पाई है और आज हम यह विधान खत्म करने जा रहे हैं वह सबके सहयोग का ही परिणाम है और हमारे बापू के ही आशीर्वाद का यह फल है जो आज हम यह विधान खत्म करने जा रहे हैं। हमें यह आशा है कि उनकी छाया में हमारा देश उत्तरोत्तर उन्नति करेगा और हम फले और फूलेंगे।

श्री हरगोविन्द पन्त (यू.पी.: जनरल): अध्यक्ष महोदय, मैं पण्डित अम्बेडकर महोदय के प्रस्ताव का समर्थन करने के लिये यहां उपस्थित हुआ हूं। मैं पंडित शब्द का प्रयोग जानबूझ कर कर रहा हूं। क्योंकि डाक्टर अम्बेडकर द्वारा इस संविधान की पांडुलिपि की रचना, उसका प्रतिपादन तथा युक्तियुक्त समर्थन जिस पांडित्य के साथ इस भवन में किया गया है वह किसी से छिपा हुआ नहीं है और उन्हें इस पद का अधिकारी सिद्ध करता है। इतना ही नहीं उनके पांडित्य से प्रभावित होकर हमारे कतिपय सदस्यों ने उन्हें मनु भगवान का पद दे देने तक की कृपा की है। यह वैवश्वत नाम का मन्वन्तर है। एक मन्वन्तर में 72 चतुर्युगी अर्थात् चौंकड़ी होती है। वैवश्वत नाम के सातवें मनु की 28वीं चौकड़ी का समय चल रहा है। और इसमें नये मनु की स्थापना करना शायद एक वैधानिक संकट उपस्थित करेगा। इसलिये मैं समझता हूं कि ''मनु'' नहीं ''उप मनु'' की उपाधि दी जा सकती है। पर इस सम्बन्ध में एक बात विचारणीय यह है कि इस विधान के बनाने में 8 मनुओं का योग रहा है। अतः यदि इन सबको ही हम अष्ट ''उपमनु'' कहें तो अनुचित नहीं होगा।

मैं प्राचीन पद्धति पर विश्वास करता हूं और उसके अनुसार तो मन्वन्तर अर्थात् एक मनु का समय बहुत लम्बा हुआ करता है। जब 72 बार चारों युग बीत जावें तब एक मन्वन्तर पूरा होता है। एक सृष्टि में 14 मनु होते हैं। अकेले कलिकाल का समय 4 लाख 32 हज़ार वर्ष का होता है। द्वापर 8 लाख 64 हजार वर्ष का होता है। त्रेता उसका दुगना होता है यानी 17 लाख 28 हजार होता है। सतयुग की अवधि 34 लाख 56 हजार होती है। कुल मिला कर 64 लाख 80 हजार हुआ। और यह केवल एक चतुर्युग अर्थात् चौकड़ी मात्र का समय हुआ अर्थात् 72 चतुर्युग का समय व्यतीत होने के बाद केवल एक मन्वन्तर हो पायेगा।

यह भारतवर्ष की वर्तमान सृष्टि की आयु के विषय की अपनी कल्पना है। यह प्राचीन भारतवर्ष का मापदंड हमारी आंखों के सामने उपस्थित करती है। सम्भव है विज्ञान की काफी उन्नति होने पर इन बातों का समर्थन होने लगे। काल की अनन्तता को लेते हुए मैं वर्तमान संविधान के दीर्घायु होने की आशा करता हूं। मुझे तो इतना कहना है कि यह जो विधान बना है वह सब के समझौते से बना है। जैसा कि मैंने कहा जो प्रस्ताव भवन के सामने हैं उसका समर्थन करने के लिये मैं यहां पर उपस्थित हूं। मैं इसमें कोई नुक्ताचीनी करना आवश्यक नहीं समझता हूं।

जैसा कि मैं कह चुका हूं कि यह संविधान सब के समझौते के रूप में तैयार किया गया है और हमको सच्चे हृदय से उसको सफल बनाना चाहिये। हमारी पुरानी पद्धति के अनुसार चतुरवर्ग की प्राप्ति मनुष्य जीवन का मुख्य उद्देश्य समझा गया है। हमारे संविधान में धर्म के लिये क्या स्थान है यह बतलाने की मुझे आवश्यकता नहीं है। और जहां धर्म का ही स्थान इस प्रकार संदिग्ध हो वहां मोक्ष की चर्चा करनी और भी अनावश्यक है।

[श्री हरगोविन्द पन्त]

शेष रह जाते हैं अर्थ और काम। इन दोनों की हमारे संविधान में उचित ही व्यवस्था की गई है और सब को उनकी प्राप्ति का समान अधिकारी माना गया है। प्राचीन भारत तो यह मानता आया है दोनों दुनिया में भलाई के ही आधार पर मिल सकती हैं जैसा कि श्री व्यास देव कहते हैं:–

अर्ध्ववाहु: विरोम्येष: नहि कश्चित श्रुणोति माम।
धर्मादर्थश्च कामश्च स: धर्म: किन्नसेकते।।

सबका सुख या समाज का हित वास्तव में धर्म के आधार पर ही हो सकता है यदि उसको भुला देवें और उसके अनुसार काम न करें, तो राष्ट्र तथा व्यक्ति कदापि सुखी नहीं हो सकते हैं। संविधान में जिस हद तक गोवध निषेध का ज़िक्र किया गया है, वह उचित ही हुआ है। पूर्वकाल में ब्राह्मण लोग अकिंचन होते थे और अपनी रक्षा करना आवश्यक नहीं समझते थे वे अपने लिये कोई संरक्षण प्राप्त करना, अपना धर्म नहीं समझते थे। अत: उनकी विधान के अनुसार रक्षा का प्रबन्ध होता था। वर्तमान विधान में परिगणित जातियों और कबीलों का संरक्षण कुछ समय के लिये रखा गया है। उनका संरक्षण भी जरूरी था, क्योंकि वह भी अपना खुद संरक्षण नहीं कर सकते। इस तरह हम पायेंगे कि पुरानी मनुस्मृति और आज की स्मृति में एक प्रकार की समता सी आ जाती है? अन्तर केवल इतना है कि "गो ब्राह्मण हिताय" के स्थान में "गो परिगणित हिताय" हो गया है। अत: मनुस्मृति के विरुद्ध प्रदर्शन उचित नहीं थे। खैर, जो भी हो, मैं तो इस विषय में अधिक न कहते हुए इस बात पर जोर दूंगा कि जो संविधान सबकी मर्ज़ी से सबके समझौते से तैयार हुआ है, उसकी हम पूर्णतया रक्षा करें। इसमें हमने बालिग़ मताधिकार रखकर एक बड़ा सुन्दर कार्य किया है, दूसरी विभूति हमें मूलाधिकार के रूप में प्राप्त हुई है और तीसरी हमें हासिल हुई है यह जो पृथक् निर्वाचन का तरीक़ा था, उसका खात्मा हो गया है, यह हमारे लिये तीसरी निधि प्राप्त हुई है। राष्ट्र भाषा हिन्दी होगी यह चौथी निधि हमें प्राप्त हुई है इन्हीं चार निधियों को हम चतुवर्ग की प्राप्ति मान सकते हैं। इन सब चीज़ों की प्राप्ति तो हमें हुई, पर इन सब का भोग, उपभोग, इनका वास्तविक लाभ तभी हमें होगा, जब हम सच्चे दिल से जो निश्चय हमने किया है, जो सबकी मरज़ी से फैसला हुआ है, उसको पूरा करने में हम सच्चे हृदय से योग देवें। मैं मानता हूं कि हमारे दक्षिण भारत के भाइयों को हिन्दी सीखने में कठिनता अवश्य होगी, परन्तु कठिनता को पार करना यही तो पुरुषार्थ है। इसलिये मैं यह चाहूंगा कि प्रत्येक निश्चय जो यहां स्वीकार हुआ है, उसको पूरी तौर पर सफल बनाना भवन के सब सदस्य और सारा देश अपना कर्तव्य समझे, तो हमारे देश का भला हो सकता है। मैं केवल इस सम्बन्ध में एक बात और कहना चाहता हूं कि यह हमारे लिये गर्व की बात है कि हमारा विधान इतना लम्बा और संसार भर के सब विधानों से बड़ा विधान होते हुए भी उसकी किसी भी धारा के विषय मत लेते समय कभी भी हाउस में किसी प्रश्न में डिवीजन की नौबत नहीं आई और मत विभाजन की एक भी सूची नहीं बनानी पड़ी। इस अद्भुत घटना का श्रेय किन महानुभाव को है, उनका नाम लेने की मुझे आवश्यकता नहीं है। श्रद्धा हृदय में होती है, प्रकट करने से उसका महत्व घट जाता है, इसलिये मैं इस विषय में किसी विशेष

व्यक्ति का नाम नहीं लूंगा। हमारे देश की स्वाधीनता के अहिंसात्मक युद्ध का इतिहास ही निराला है। हम लोग सब अपने हृदय में जानते हैं कि किसकी बदौलत, किसकी कृपा से यह ऐसा मौका आया। संसार के इतिहास में जो कभी घटित नहीं हुआ था, वह यहां घटित होकर रहा। मुझे जब कभी मैं इस भवन में आता था, तो सबसे पहले नज़र पड़ती थी महात्मा गांधी के चित्र पर और मुझे यह पूरा विश्वास है कि यद्यपि यह तैल चित्र भवन के एक निश्चित स्थान पर रखा है, पर महात्मा जी की आत्मा तो सारे देश में, हमारे हृदयों में व्याप्त है। यह सब कुछ उनकी ही तपस्या का फल है। आज उस चित्र को देखते हुए ऐसा मालूम होता है, वह चित्र संकेत कर रहा है। देश ने कुछ आय के लालच में पड़कर दंडी की महान यात्रा को भुला दिया। खेद है नमक कर के विषय में हम कोई स्पष्ट फैसला नहीं कर पाये हैं। पर मैं आशा करता हूं कि भविष्य में इस राष्ट्र को कभी नमक पर कर लगाने की आवश्यकता न होगी। सांभर झील के प्रबन्ध के विषय में काफ़ी शिक़ायतें सुनते हैं यदि नमक पर कर लगा तो दूसरे प्रान्तों में नमक महंगा हो जायेगा। मैं सन् 1905 से कांग्रेस में काम करता रहा हूं, मेरा तब से यह विश्वास रहा है कि भारतवर्ष की राष्ट्रीय आत्मा जीवित है और जागृत है। मैं जब विद्यार्थी जीवन में था, तो अखबारों में खुदीराम बोस तथा कन्हैयालाल दत्त आदि अन्य देशभक्तों की कथा पढ़ कर देश के अमरत्व में विश्वास करता था। मुझे पूरा विश्वास है कि जब इस युग में भी महात्मा गांधी जैसे महापुरुष हमारे बीच में पैदा हो सकते हैं, तो भारतवर्ष की आत्मा जीवित है, हमारी राष्ट्रीय आत्मा जीवित है और हमें कोई कारण निराश होने का नहीं है, केवल सच्चे दिल से हमें काम करने की आवश्यकता है। अगर हम जिस निश्चय पर पहुंचे हैं, उसका पालन करने में सब लोग एक हृदय से योग देवें तो हमारी सफलता निश्चित है और जो ऊंचा स्थान भारतवर्ष का पुराने इतिहास में था, उससे भी ऊंचा स्थान हमें मिल सकता है। अभी चर्चा इस बात की होती थी कि इस संविधान का प्रचार जनता में किया जाये और लोगों को उसकी विशेष धाराओं का महत्व बतलाया जाये। मैं यह बतला देना चाहता हूं कि इस विषय में जो लोग काम करने वाले हैं, अभी से प्रचार कार्य में लग गये हैं और थोड़ा थोड़ा बहुत मैंने भी इस दिशा में कार्य आरम्भ कर दिया। मुझे इस सम्बन्ध में एक कठिनता है, मेरा प्रदेश हिमालय प्रदेश है, जहां कि बहुत बड़े सुरम्य स्थान तथा पवित्र तीर्थ हैं, वहां देश के लोगों का आवागमन बहुत कम रहता है। यात्रा के लिये भी लोग कम जाते हैं और बाहर के लोगों से हमारे प्रदेश के निवासियों का सम्पर्क बहुत कम रहता है। अतः देश राष्ट्रीय दृष्टि से हमारे प्रदेश का महत्व नहीं जान सका है। इसलिये यह सारा भार हमारे ही ज़िम्मे आ जाता है, अपने यहां की जनता को जागृत करें और देश के प्रति उनका क्या कर्तव्य है सो बतलायें। मैं आपको विश्वास दिलाना चाहता हूं कि इन आन्तरिक असुविधाओं के होते हुए भी हम अपने कर्तव्य का पालन कर रहे हैं और करते जायेंगे। अखबार पढ़ने से मालूम ही होगा कि तिब्बत पर चीन के साम्राज्यवादियों की नज़र पड़ने लगी है, और तिब्बत हमारे इस प्रदेश से बिल्कुल मिला हुआ है। सम्भव है कि थोड़े ही समय में हमें अपना कर्तव्य देश के प्रति पालन करने का अवसर आ जावे और हम यह दिखा सकें कि वास्तव में हम लोग देश की सेवा अपने तन, मन और धन से करने के लिये तत्पर रहते हैं। अन्त में मैं केवल यही कहूंगा कि मेरा सौभाग्य है कि संविधान की इस अवस्था में, इस कार्य में शामिल होने का मुझे भी सुअवसर मिले और आपकी कृपा से दो शब्द कह सका। इसलिये मैं

[श्री हरगोविन्द पन्त]

आपको हृदय से धन्यवाद देता हूं और मुझे आशा है कि जो अमर भारत है वह सदा ही अमर भारत रहेगा और संसार के हित का बहुत कार्य करेगा।

***श्री सारंगधर दास** (उड़ीसा: जनरल): अध्यक्ष महोदय, इस संविधान को मैं पूर्ण समर्थन नहीं दे सकता हूं क्योंकि यह कोई क्रांतिकारी संविधान नहीं है। इस संविधान के अनुसार देश का वर्तमान सामाजिक और आर्थिक ढांचा ज्यों का त्यों बना ही रहेगा। पर इसके कुछ दोष ऐसे हैं जो बिल्कुल प्रत्यक्ष हैं। मैं इन्हीं दोषों को और खास करके जिनका सम्बन्ध मूलाधिकारों से है, सभा की निगाह में ला देना चाहता हूं। इसमें शक नहीं कि मूलाधिकारों के द्वारा कतिपय बहुत ही महत्वपूर्ण अधिकार जनता को दिये गये हैं पर बाद के एक अनुच्छेद द्वारा अर्थात् अनुच्छेद 22 के द्वारा जो निवारक निरोध के बारे में है, इनमें से बहुत से अधिकार छीन भी लिये गये हैं। सुतरां यह कहना सही नहीं हो सकता है कि मूल अधिकार हमको पूर्णत: दिये गये हैं।

फिर इस सम्बन्ध में मैं उस खण्ड का भी उल्लेख करूंगा जो सम्पत्ति के अवाप्तिकरण के बारे में रखा गया है। सम्पत्ति के अवाप्तिकरण के लिये प्रतिकर देने की जो व्यवस्था की गई है वह वर्तमान आर्थिक व्यवस्था के आधार पर ही की गई है और यह कहना सरासर गलत है कि इस संविधान के द्वारा हम जनता के लिये एक सुख समृद्धि का युग उपस्थित करने जा रहे हैं। मेरा निजी मत यह है कि देश के सभी प्राकृतिक साधनों का तथा उत्पादन के सभी साधनों पर समाज का स्वामित्व है और यह सभी साधन समाज की सम्पत्ति हैं। इस विचारधारा को हम सर्वथा नई और क्रांतिकारी विचार धारा नहीं कह सकते हैं क्योंकि हम यह देखते हैं कि अन्य बहुत से देशों में और खासकर के अमेरिका में जहां सम्पत्ति के स्वामित्व को पहले बहुत ही पवित्र माना गया था इधर 19वीं और बीसवीं शताब्दी में इस ख्याल में बड़ा परिवर्तन हो गया है। मेरा ख्याल तो यह है कि संविधान में हमें यह घोषित कर देना चाहिये था कि देश के सभी प्राकृतिक साधनों पर तथा उत्पादन और वितरण के सभी उपायों पर समाज का स्वामित्व है और जहां तक कि ऐसी सम्पत्ति के अवाप्तिकरण का सम्बन्ध है इसके लिये प्रतिकर देने की व्यवस्था न होनी चाहिये क्योंकि इस तरह की सम्पत्ति को रखने वाले व्यक्ति आज सैकड़ों वर्षों से इस सम्पत्ति का उपयोग करते आये हैं और उन्होंने इससे प्रचुर लाभ उठा लिया है। ऐसी दशा में मैं तो कोई कारण नहीं देखता कि इस सम्पत्ति को अवाप्त करने के लिये अब इसके स्वामियों को प्रतिकर क्यों दिया जाये। विस्तार की बातों में मैं नहीं जाना चाहता पर यह जरूर कहना चाहता हूं कि जो बात मैंने ऊपर कही है उसका भी हमें ध्यान रखना चाहिये था। मैं जानता हूं कि प्रतिकर सम्बन्धी खण्ड का यहां कुछ लोगों ने विरोध किया था पर अन्ततोगत्वा वह खण्ड बहुमत से स्वीकृत ही हो गया।

कई माननीय मित्रों ने यहां इस बात की भी चर्चा की है कि गांधी जी किस तरह का लोकतंत्र चाहते थे। उन्होंने इस बात पर खेद प्रकट किया है कि गांधी जी के सिद्धान्तों को संविधान में स्थान ही नहीं दिया गया है। जहां तक मेरा निजी सम्बन्ध है मैं इस प्रश्न को यहां उठाना नहीं चाहता पर यह जरूर कहना चाहता हूं कि जहां तक बोलने का सम्बन्ध है हम लोग एक ऐसे समाज के निर्माण

की बात जरूर करते हैं जिसमें न कोई ऊंच होगा और न नीच अर्थात् उस समाज में सभी की आमदनी जहां तक सम्भव हो सकेगा समान रखी जायेगी। कहते तो हम यह सब बातें ज़रूर हैं पर खुद संविधान में हमने राष्ट्रपति से लेकर सभी उच्च पदाधिकारियों के लिये बड़े लम्बे लम्बे वेतनों की व्यवस्था रख छोड़ी है। जब निम्नतर स्तर के सरकारी कर्मचारियों के लिए तीस रुपये मासिक वेतन की व्यवस्था की है तो उस हालत में राष्ट्रपति को दस हजार माहवार देना बिल्कुल बेतुकी बात है। जब मैं अमेरिका में था उस समय यानी आज से करीब पच्चीस साल पहले भी, मुझे याद है कि किसी स्थान में भी कर्मचारियों के अधिकतम और अल्पतम वेतन में इतना अन्तर नहीं रहा है जितना कि यहां अब रखा गया है। यदि उच्चतम वेतन पाने वाले कर्मचारियों की सेवाओं को इसी दृष्टि से देखेंगे तो हम किस तरह यह बात कह सकते हैं कि हम एक ऐसा संविधान पास कर रहे हैं जो एक ऐसे समाज का निर्माण करेगा जिसमें आर्थिक और सामाजिक दृष्टि से सभी समान होंगे।

अब मैं राष्ट्रीय भाषा के सम्बन्ध में कुछ बातें कहना चाहता हूं। भाषा सम्बन्धी अनुच्छेद जिस रूप में स्वीकार किया गया है उससे तथा उस पर आज सवेरे श्री थानु पिल्ले ने जो कुछ कहा है उससे मेरा पूर्ण मतैक्य है। पर मैं इतना अवश्य कह देना चाहता हूं कि इस सम्बन्ध में एक बड़ी महत्वपूर्ण बात का ज़िक्र करना ही वह भूल गये और दुर्भाग्य की बात यह है कि वह बात उनकी समझ में आ भी नहीं सकती। गांधी जी का तथा उन लोगों का भी जो इस बात को जानते हैं कि भाषा के बारे में दुनिया किस तरह चलती है, मूल मत यही था कि हिन्दुस्तानी हमारी राष्ट्रीय भाषा होनी चाहिये। भाषा सम्बन्धी अनुच्छेद जिस रूप में लिपिबद्ध किया गया है उसका अर्थ तो निस्सन्देह यही होता है कि हमारी राष्ट्र भाषा हिन्दुस्तानी होगी पर मेरा विश्वास है कि इसे हिन्दी कहना गलत होगा क्योंकि हिन्दी की वकालत यहां दो तीन प्रान्तों के कुछ सदस्यों ने की है जो हमेशा इसमें मूल संस्कृत शब्दों को रखने की बात कहते हैं और उनके इस मंतव्य का दक्षिण भारत में, बंगाल में और मेरा ख्याल है कि बम्बई के कुछ हिस्सों में भी, बड़ा विरोध हुआ है। वह भाषा जिसे कि यहां कि लोग बोलते हैं वह वस्तुतः हिन्दुस्तानी ही है और यहां के अहिन्दुस्तानी भाषी प्रदेशों के लोग भी हिन्दी में बोलने वाले वक्ता की अपेक्षा हिन्दुस्तानी में बोलने वाले वक्ता की बातों को अधिक अच्छी तरह समझ पाते हैं। हमारे उड़ीसा प्रान्त को ही लीजिये। यद्यपि हम लोग हिन्दुस्तानी बोलते हैं पर हिन्दी की अपेक्षा हिन्दुस्तानी को और अच्छी तरह समझ लेते हैं। यह इस लिये कि शुद्ध हिन्दी में जिसकी संयुक्त प्रान्त और मध्य प्रान्त यहां वकालत कर रहे हैं, संस्कृत के अनेक शब्द रहते हैं जो सर्वसाधारण के लिए बोधगम्य नहीं होते क्योंकि वह संस्कृत पढ़े नहीं हैं। अगर संविधान निर्माताओं में शुद्ध हिन्दी के हिमायती मित्रों के दबाव में आकर इस अनुच्छेद को पास किया है तो उन्होंने बड़ी गलती की है। भाषा सम्बन्धी अनुच्छेद के स्वीकृत हो जाने पर मुझे दक्षिण भारत में तथा बंगाल में भी यात्रा करने का मौका मिला था और वहां सर्वत्र मैंने इस अनुच्छेद का घोर विरोध ही देखा। विरोध का और कोई कारण नहीं है केवल एक कारण यही है कि वहां वालों को यह ख्याल है कि उत्तर भारत के लोग ज़बरदस्ती उनपर यह भाषा लाद रहे हैं। मेरा ख्याल है कि उन का यह आक्रोश ठीक ही है। इसलिए इस अनुच्छेद को कार्यान्वित करने का जब समय हो तो तत्कालीन शासन को इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि उसी तरह की हिन्दुस्तानी यहां राष्ट्र भाषा के रूप में व्यवहृत हो जिस तरह की हिन्दुस्तानी

[श्री सारंगधर दास]

का प्रसार देश के कई भागों में हिन्दुस्तानी प्रचार सभा कर रही है। जब समस्त देश में लोग हिन्दुस्तानी को अपना लेंगे उस समय मेरा ख्याल है कि भाषा के सम्बन्ध में लोगों की जो मिथ्या आशंकायें हैं वह चन्द दिनों के अन्दर अपने आप खत्म हो जायेंगी।

जहां तक रियासतों का सम्बन्ध है यहां कई मित्रों ने और रियासतों से आये हुए कुछ मित्रों ने भी उस अनुच्छेद का समर्थन किया है जिसमें रियासतों और रियासती संघों—जैसे कि मैसूर का राज्य और ट्रावंकोर-कोचीन राज्य-संघ—को अभी दस साल तक केन्द्रीय शासन के संरक्षण में रखने की व्यवस्था की गई है। जब इस अनुच्छेद पर यहां विचार किया जा रहा था उस समय मैंने इसका विरोध किया था। उन मित्रों से मैं सहमत नहीं हूं जो इस व्यवस्था का समर्थन करते हैं। कुछ रियासतें कितनी भी पिछड़ी क्यों न हों पर मेरा ख्याल है कि यहां की जनता के तथा उसके प्रतिनिधियों के लोकतंत्रीय अधिकारों को छीनना और उनको केन्द्र की कृपा पर आश्रित रखना ठीक न होगा। जब इन रियासतों का—जिनकी संख्या 6 सौ से कुछ ऊपर है—स्वतंत्र राजनीतिक अस्तित्व समाप्त कर दिया गया है तो उनके लिये अब इस तरह का उपबंध रखना एक बड़ी प्रतिगामी व्यवस्था होगी। इन रियासतों के कतिपय भागों को अब दस साल तक के लिये केन्द्र के नियंत्रणाधीन रखना वस्तुतः एक प्रतिगामी व्यवस्था ही कही जायेगी। फिर इस सम्बन्ध में मुझे यह भी कहना है कि यद्यपि इन रियासतों का स्वतंत्र राजनीतिक अस्तित्व समाप्त कर दिया गया है और हम यह कहते हैं कि देशी नरेश अब नहीं रह गये हैं पर मैं नहीं मानता कि वह नहीं रह गये हैं। निजी थैली के रूप में उन्हें रकम मिलेगी ही तथा अन्य परिलाभ भी उन्हें मिलेंगे ही चूंकि इन सब बातों की व्यवस्था संविधान में कर दी गई है इसलिये वह तो सदा के लिये बने ही रहेंगे। वस्तुतः इस व्यवस्था से तो देशी नरेशों को और लाभ हो जायेगा क्योंकि अब उन पर अपने प्रदेश के प्रशासन की कोई जिम्मेदारी ही न रह जायेगी। कोई जिम्मेदारी न रहने पर भी निजी थैली की रकम वह पाते रहेंगे। फिर उनको इतनी रकम देना इसलिये गैर वाजिब भी है कि युद्धकालीन स्फीत आय के आधार पर यह रकम निश्चित की गई है इसलिये मेरा मंतव्य यह है कि नरेशों को समाज में बना रहने दिया गया है पर एक दूसरे रूप में अपने प्रदेशों पर शासन का अधिकार उन्हें अब ज़रूर नहीं रह गया है। और वह शासक के रूप में नहीं रह गये हैं पर एक नये निहित-स्वार्थ वर्ग के रूप में वह अवश्य कायम रखे गये हैं। उस रूप में उनको बनाये रखना न वांछनीय कहा जा सकता है और न यह व्यवस्था उस तरह के समाज के निर्माण के लिये सहायक हो सकती है जिसको संविधान कायम करना चाहता है।

यह बात भी आपत्तिजनक है कि केन्द्र को आवश्यकता से अधिक अधिकार दिये गये हैं। मुझे याद है, सन् 1947 में जब संविधान की मूल बातों के बारे में निर्माण किया गया था उस समय केन्द्र को इतने अधिकार देने की बात नहीं सोची गई थी। मैं इस बात को समझता हूं कि देश विभाजन के बाद से स्थिति में परिवर्तन हो गया है। फिर भी केन्द्र को इतने व्यापक अधिकार देना, इसे इस पदाधिकारी, उस पदाधिकारी और राज्यपाल आदि के मनोनयन का अधिकार देने

का परिणाम यह होगा कि अधिकारारूढ़ दल को इस बात का मौका मिलेगा कि वह स्थायी रूप से अपने को अधिकारारूढ़ बनाये रखे। फिर जहां तक कि प्रान्तों के राज्यपालों के मनोनयन के अधिकार का सम्बन्ध है, मुझे आशंका इस बात की है कि अगर किसी प्रान्त में वर्तमान शासनारूढ़ दल से भिन्न कोई और दल अगर अधिकार में आ जाता है और राज्यपाल वहां नियुक्त किया कोई ऐसा व्यक्ति जो वर्तमान शासनारूढ़ दल का आदमी है तो वहां राज्यपाल और शासन के बीच यानी मंत्रिमंडल कभी सहायक नहीं हो सकती है। इस दृष्टिकोण से, मेरा विश्वास यही है कि केन्द्र में इतनी व्यापक शक्तियों को विहित करने का परिणाम यह होगा कि यहां शनैः शनैः एक दल विशेष की डिक्टेटरशिप चालू हो जायेगी।

फिर संविधान में रखी गई एक और व्यवस्था भी आपत्तिजनक और यह लोकतंत्रीय सिद्धान्तों से सर्वथा प्रतिकूल है जिसका मैं यहां ज़िक्र कर देना चाहता हूं। वह आपत्तिजनक व्यवस्था यह है कि राज्य परिषद् में राष्ट्रपति द्वारा मनोनीत कतिपय सदस्यों को रखने की बात और इन मनोनीत सदस्यों में से दो एक को केन्द्रीय मंत्रिमण्डल में रखने की बात भी कही कही गई है। एक तरफ तो हम लोकतंत्र का नारा लगा रहे हैं और दूसरी तरफ हम ऐसी पद्धतियों का अवलम्बन कर रहे हैं जो लोकतंत्रीय सिद्धान्तों के सर्वथा विपरीत है।

जो थोड़ा समय मुझे यहां मिला है उसमें तो इन त्रुटियों का ही दिगदर्शन करा सकता हूं जिनका उल्लेख मैंने ऊपर किया है। पर मैं इस तथ्य को अस्वीकार नहीं करता कि संविधान में कुछ खूबियां भी हैं जिनका ज़िक्र मुझे यहां करना ही चाहिये।

अपने अधिकांश मित्रों से और खासकर के हिन्दू मित्रों से मैं सहमत नहीं हूं जो गणतंत्रीय शासन पद्धति को अर्थात् यहां की प्राचीन गणतंत्रीय व्यवस्था को स्थापित करने पर इतना तूमार बांध रहे हैं। मेरा कहना यह है कि देश के निम्नतर के लोगों को समाज की निम्न जातियों को जिनको हम हरिजन कहते हैं यहां हमेशा दलित अवस्था में ही रखा गया है। इस लिये यहां वास्तविक लोकतंत्र तो कभी रहा नहीं है। अगर यहां कोई लोकतंत्र या गणतंत्र रहा है तो वह केवल उच्च जातियों तक ही सीमित रहा है। अगर इस दृष्टिकोण से हम संविधान पर विचार करते हैं तो हमें यह स्वीकार करना होगा कि अस्पृश्यता को उठाने वाला उपबंध तथा वयस्क मताधिकार सम्बन्धी उपबंध ये दोनों उपबंध संविधान की वयस्क मताधिकार का अधिकार केवल गोरे पर स्वतंत्र नागरिकों को ही दिया गया था क्योंकि उन दिनों कुछ गोरे भी ऐसे थे जो दास थे और पश्चिमी द्वीप समूह में तथा करेबियन द्वीपों में दास वृत्ति करते थे। उनको मताधिकार से वंचित ही रखा गया था। कालों को, निग्रो लोगों को तो अधिकार दिया ही नहीं गया था। उनको मताधिकार से वंचित ही रखा गया था। उनको तो मताधिकार उस समय मिला जब श्री अब्राहम लिंकन अधिकार में आये। इसलिये मेरा यह मत अवश्य है कि अपने संविधान में जो वयस्क मताधिकार का उपबंध रखा गया है, महिलाओं को समता देने का और अस्पृश्यता को उठाने का जो उपबंध रखा गया है यह सभी बातें संविधान की सर्वोत्कृष्ट विशेषतायें हैं।

[श्री सारंगधर दास]

संविधान की एक उत्कृष्ट विशेषता यह भी है कि इसने राज्य को सर्वथा धर्म निरपेक्ष रखने की व्यवस्था की है। इसमें कोई सन्देह नहीं कि राज्य को धर्म निरपेक्ष रखने के लिये जो कुछ भी हो सकता है संविधान द्वारा किया गया है गोकि अनेक सदस्यों ने इसकी तीव्र आलोचना की है इस आधार पर कि यह व्यवस्था सर्वथा अभारतीय है यानी हिन्दू धर्म की उपेक्षा कर के रखी गई है। इस सम्बन्ध में मैं यह कह दूं कि अब किसी भी शिक्षण संस्था में, चाहे वह हिन्दुओं की हों या मुसलमानों की या इसाइयों की, धार्मिक शिक्षा न दी जायेगी। इस सम्बन्ध में जो खण्ड रखे गये है उनमें कुछ में यह उपबंध ज़रूर रखा गया है कि कतिपय विशेष स्थितियों में धार्मिक शिक्षा देने की अनुमति मिल सकती है पर मेरा ख्याल यही है कि यह बात हटा दी जानी चाहिये।

यद्यपि संविधान की कतिपय गम्भीर त्रुटियों का यहां उल्लेख किया है पर चूंकि संविधान में वयस्क मताधिकार की व्यवस्था की गई है इसलिये मुझे विश्वास है कि जनता जो आगे चल कर मताधिकार का प्रयोग करेगी वह अगर चाहेगी तो समूचे संविधान को बदल सकती है और मेरा ख्याल है कि वह ऐसा जरूर ही चाहेगी। इसलिये मैं न तो इस संविधान की निन्दा ही करूंगा और न इससे असहमति की प्रकट करूंगा जैसा कि कतिपय मित्रों ने किया है। इसकी निन्दा करने में कोई लाभ नहीं है। जब वयस्क मताधिकार की व्यवस्था रखी गई है तो आगे चलकर इस अधिकार का प्रयोग करके हम अपनी आवश्यकतानुसार संविधान में ये परिवर्तन कर सकते हैं।

इन शब्दों के साथ मैं धन्यवाद देता हूं मसौदा समिति को और धन्यवाद देता हूं आपको श्रीमान कि इस संविधान के निर्माण में आपने इतना अधिक प्रयास किया और सभा के सभी वर्गों को सन्तोष देने के लिये जो कुछ भी हो सकता था किया।

***श्रीमती अम्मू स्वामिनाथन्** (मद्रास: जनरल): अध्यक्ष महोदय, बिना किसी अत्युक्ति के यह बात कही जा सकती है कि स्वतंत्र भारत के लिये इस संविधान को स्वीकार करके सभा ने देश के चालीस करोड़ नर नारियों के स्वप्नों को पूरा किया है। इस स्वप्न की पूर्ति के लिये देशवासी कितने ही दिनों अथक प्रयास करते आ रहे हैं और आज वह सुदिन हमें प्राप्त हुआ है कि हमारा स्वप्न पूरा हुआ है।

आज मध्यान्ह काल में यहां खड़ा होने पर जो पहली तस्वीर मेरे दिमाग में आ रही है वह है। महामानव महात्मा गांधी की जिन्होंने अनेकानेक वर्षों के अपने अथक प्रयास द्वारा यह सम्भव बनाया है कि आज हम स्वतंत्र हो गये हैं। मेरा ख्याल यह है कि अगर हम वस्तुत: अपने को इस संविधान के लायक बनाना चाहते हैं तो हमें इस बात का पक्का इरादा कर लेना होगा कि हम इसे एक सजीव वस्तु मानकर इस पर इस तरह अमल करेंगे कि देश के प्रत्येक नर नारी को लाभ पहुंच सके। मैं यह जानती हूं कि संविधान में हमें मूलाधिकार दिये हैं।, समता का अधिकार दिया है, वयस्क मताधिकार की व्यवस्था की है तथा अस्पृश्यता को उठाने की व्यवस्था की है और इसी तरह की अन्य कई बातों का उपबंध इसने किया है जिसके लिये हम वर्षों से संघर्ष करते आ रहे हैं। पर अगर हम

देश को सुखी और सम्पन्न बनाना चाहते हैं तो इन अधिकारों को केवल संविधान में लिपिबद्ध कर देने से ही हमारा काम नहीं चल जायेगा। हमें कोशिश इस बात की करनी होगी कि संविधान में रखे गये विचारों और आदर्शों को क्रियान्वित किया जाये और देश के लोग उन पर अमल करें।

अन्य सदस्यों का अनुगमन करते हुए जिन्होंने आपको धन्यवाद दिया है और अपनी कृतज्ञता प्रकाशित की है, मैं भी आपको अपनी श्रद्धांजलि अर्पित करना चाहती हूं। सभा के सभी सदस्य आपको सदा असीम स्नेह और श्रद्धा से याद करेंगे। सभा के प्रत्येक सदस्य के प्रति आपने सदैव सदय और सहृदय बर्ताव किया है जिसे हम लोग कभी भूल नहीं सकते हैं।

डॉ. अम्बेडकर को, समिति के सदस्यों को तथा संविधान सभा कार्यालय के कर्मचारियों का भी हम धन्यवाद दिये नहीं रह सकते हैं। इन्होंने इतने दिनों तक घोर परिश्रम के साथ संविधान निर्माण के कार्य में हमें चंद सहायता दी है। मैं जानती हूं कि इनका काम आसान नहीं रहा है, इनको तरह तरह की कठिनाइयों का सामना करना पड़ा है। पर इन्होंने सभी कठिनाइयों को पार किया। इसी का फल है कि आज हम संविधान को पास करने जा रहे हैं।

मैं यह अनुभव करती हूं कि अपने संविधान के वस्तुतः दो ही मुख्य स्तम्भ हैं एक तो मूलाधिकार दूसरे राज्य की नीति के निदेशक तत्व और उन्हीं दो स्तम्भों पर समूचा संविधान खड़ा है। भाषा के बारे में संघ बनाने और पूजा पाठ के बारे में देशवासियों को मूलाधिकारों के अधीन पूरी स्वतंत्रता प्राप्त रहेगी। जहां तक पूजा पाठ का सम्बन्ध है यहां वालों के लिये यह एक बड़ी महत्वपूर्ण बात होती है। हिन्दू सदा से ही इस बात के लिये प्रसिद्ध हैं कि वह सभी धर्मों का आदर करते हैं और हमने इस बात को संविधान में भी रख दिया है ताकि इस सम्बन्ध में किसी को भी कोई गलतफहमी न हो और कोई यह न कह सके कि संविधान में स्वेच्छानुसार उपासना की स्वतंत्रता नागरिकों को नहीं दी गई है।

अब यह देखना हमारा काम है कि संविधान समुचित रूप से अमल में लाया जाये ताकि देश में लोकतंत्रीय राज्य की स्थापना हो सके जिसके लिये हम इतने दिनों से प्रयास करते आये हैं। फिर लोकतंत्रीय राज की स्थापना हो जाने पर हमें ध्यान देना होगा न सिर्फ इस बात की ओर कि नागरिकों के अधिकार सुरक्षित रहें बल्कि हमें इसकी भी कोशिश करनी होगी कि नागरिकों को यह मालूम रहे कि राज्य के प्रति उनके कर्तव्य और दायित्व क्या हैं। नागरिकों के स्वातंत्र्य का उपयोग होना चाहिये देश की भलाई के लिये। वह अपने स्वातंत्र्य का उपयोग इसके लिये नहीं कर सकते हैं जो मन में आये करें। जैसा कि अक्सर कहा गया है, स्वतंत्रता का मतलब यह नहीं है कि लोग उच्छृंखल होकर जो चाहे करें। हमें इस बात की आशा करनी चाहिये कि आगे चलकर अपना यह संविधान देश के लिये एक उपयोगी और योग्य संविधान ही समझा जायेगा। यद्यपि ऐसे लोगों की संख्या कम नहीं है जो संविधान के अनेक खण्डों को दोषपूर्ण समझते हैं पर मुझे विश्वास है कि ये लोग इस बात को भी ध्यान में रखेंगे कि जब हम यहां संविधान निर्माण का काम कर रहे थे उस समय सारा देश एक कठिन समय से होकर गुज़र रहा था और वैसे समय में संविधान बनाने का काम बड़ा कठिन

[श्रीमती अम्मू स्वामिनाथन्]

काम था। मैं यह महसूस करती हूं कि हमारे लिये लिये यह एक बड़ी सफलता की बात है कि भिन्न भिन्न विचारों के लोगों को साथ लेकर चलने में और इस तरह का संविधान बनाने में हम समर्थ हो पाये हैं जिसे सब लोगों ने नहीं तो, एक बहुत बड़े बहुमत ने स्वीकार किया है।

इस सभा के अनेकानेक सदस्यों ने इस संविधान की प्रशंसा की है और कुछ लोगों ने इसकी निन्दा भी की है। इसके विरुद्ध एक शिकायत यह भी की जाती है कि यह एक बहुत ही लम्बा और वृहदाकार है। संविधान के सम्बन्ध में सदा ही मेरा ख्याल यही रहा है और अब भी यही है कि यह एक छोटी सी पुस्तिका के रूप में होना चाहिये जिसे कोई अपने पाकेट में या मनी बेग में रख सके। इसमें विस्तार की अनेक बातों का उल्लेख किया गया है। जिनके उल्लेख की इसमें कोई ज़रूरत नहीं थी। मेरा ख्याल है कि विस्तार की इन सभी बातों को हमें शासन या विधान मण्डलों पर छोड़ देना चाहिये था। आखिर शासन या विधान मण्डल तो संविधान में रखी गई नीति के अनुसार ही अपना प्रकार्य करेंगे। फिर मैं पूछती हूं कि इन सब विस्तार की बातों से संविधान को बोझिल बनाने की जरूरत क्या थी? संविधान निर्माण के बारे में मेरी जानकारी नहीं के बराबर है, इस विषय में विशेषज्ञ होने का मैं दिखावा नहीं करती। किन्तु भारत के एक नागरिक की हैसियत से और एक ऐसे नागरिक की हैसियत से जो विधान मण्डल का दो तीन साल तक सदस्य रहा है, मैं यह ज़रूर अनुभव करती हूं कि संविधान में इतने विस्तार की बातों को रखने की कोई ज़रूरत नहीं थी। अस्तु, संविधान जिस रूप में हमारे सामने हैं, उसे मैं एक महत्वपूर्ण कृतित्व समझती हूं। मेरे लिये यह एक बड़ी प्रसन्नता और सुख की बात रही है कि इस संविधान को तैयार करने वाली संविधान सभा के एक सदस्य के रूप में यहां उपस्थित रह कर संविधान रचना के काम में योग दान देने का मुझे सुअवसर मिला है और मुझे विश्वास है कि हममें से कुछ लोग जीवित रह कर यह देख सकेंगे कि मानव अधिकारों की रक्षा के लिये अपना संविधान एक सुदृढ़ गढ़ का काम दे रहा है। मुझे विश्वास है कि एक वास्तविक लोकतंत्र को स्थापित करने के लिये इस पर अमल किया जायेगा ताकि यहां का प्रत्येक नागरिक सुखी और सम्पन्न हो सके।

सबको समान अधिकार देना एक बहुत बड़ी बात है और संविधान में यह बात रखकर हमने बहुत ठीक काम किया है। बाहर के लोग यह कहते रहे हैं कि भारत ने स्त्रियों को समान अधिकार नहीं दिया है। अब हम यह कह सकते हैं कि जब हमें अपने संविधान को स्वयं बनाने का मौका मिला तो हमने स्त्रियों को भी वह सब अधिकार दिये हैं जो औरों को दिये गये हैं। यह हमारी एक बहुत बड़ी सफलता है और इससे हमारे महिला समाज को न केवल इस बात में ही सहायता मिलेगी कि वह अपने दायित्वों को समझ सकें बल्कि अब वह आगे बढ़कर अपने दायित्वों को सम्भाल सकेंगी। और भारत को अतीत कालीन भारत की तरह महान देश बना सकेंगी।

इन शब्दों के साथ श्रीमान, मैं इस प्रस्ताव का प्रबल समर्थन करती हूं कि इस संविधान को स्वीकार किया जाये।

श्री एल.एस. भाटकरः (सी.पी. और बरारः जनरल)ः श्रीमान सभापतिजी, हमारे राष्ट्र के स्वतंत्र होने के पश्चात्, हमारा यह विधान डॉ. अम्बेडकर और ड्राफ्टिंग कमेटी दोनों के परिश्रम से बना इसके लिये मैं उन दोनों को बधाई देता हूं।

इस विधान के बनाते समय इसमें बहुत सी कमी रह गई है। फंडामेंटल राइट्स के आर्टिकल 19 में जो भी अधिकार जनता को दिये गये हैं वह न देने सरीख हैं क्योंकि उस आर्टिकल में जो भी दिया है तो उसको निकाल लिया गया है। आर्टिकल 17 में एबालिशन ऑफ अनटचेबलेटी रखी गई है इसके लिये ड्राफ्टिंग कमेटी को बधाई देता हूं। अनटचेबलेटी को समाप्त करने का कानून हर प्रान्त में बनाया गया है परन्तु वह केवल कानून की पुस्तक में ही पड़ा है उसका पालन कहीं नहीं होता। जो अस्पृश्यता हजारों वर्षों से सर्वण हिन्दुओं के रोम रोम में भिदी हुई है थोड़े से सज्जन उसको निकालने के लिये प्रयत्न कर रहे हैं लेकिन कानून द्वारा निकालने से पहले सवर्ण हिन्दुओं को अपने मन की शुद्धि करने की आवश्यकता है। इसी प्रकार अस्पृश्यता का अन्त हो सकता है। राष्ट्रपिता महात्मा गांधी जी ने जो सबक इसको दूर करने का सिखाया है उसका पठन कर के परीक्षा में पास होने की जवाबदोशी आपके सिर पर है।

ये जो विधान बन रहा है उसमें काश्तकार और मज़दूरों के लिये स्थान नहीं है। जो सरकारी कर्मचारी हैं उनको ज्यादा तन्खाहें देने की ही तत्परता इसमें दिखाई गई है। जो काश्तकार और मजदूर हैं, जो राष्ट्र की उन्नति के लिये रात दिन कष्ट सहते रहते हैं जिन्होंने राष्ट्र के स्वतंत्र करने के समय तकलीफें भोगी हैं उनके लिये इस विधान में कहीं पर भी कुछ दिखाई नहीं पड़ता। यह तो केवल अमीरों के रक्षण के लिये बन रहा है। हज़ारों बीघा जमीन ज़मींदारों ने काश्तकारों से तरह-तरह से लूटी हैं। उस जमीन को किसानों को देने का इस में कहीं पर कोई प्रत्यत्न नहीं है। जब तक कारखानों का राष्ट्रीकरण नहीं किया जाता तब तक राष्ट्र की उन्नति नहीं हो सकती। प्रान्तों में जमींदारी नष्ट करने के लिये कानून बन रहा है जब कि काश्तकार लोगों की ज़मीन अन्य भागों से लूटी गई है। वह जमीन काश्तकार लोगों को रुपया खर्च करके लेनी पड़ रही है। इसका मतलब तो यही निकलता है कि जो ज़मींदार हैं उनको और बलवान बनाया जा रहा है। इस विधान में इस बात का रहना जरूर था कि काश्तकारों को जमीन मुफ्त मिलेगी। महात्मा जी ने हमें बताया है कि यह राष्ट्र तब स्वतंत्र समझा जायेगा जब कि काश्तकार और मज़दूरों के लिये फलदायक होगा। इस विधान में उनके लिये कोई लाभ की बात नहीं दिखाई देती।

विधान में माइनारिटी के संरक्षण के बारे में काफी प्रयत्न किया गया है। आर्टिकल 338 में शैड्यूल्ड कास्ट्स के लिये न्याय मिलने की बात कही गई है। सभापति जी आज तक नौकरी में हरिजनों को जो स्थान था वह मैं आपको बतलाना चाहता हूं।

[श्री एल.एस. भाटकर]

सी.पी. और बरार

कास्ट	1931 में जनसंख्या	गज़ेटेड पोस्ट्स
ब्राह्मण	5,42,555	448
मरहठा और अन्य	18,82,654	17
शेड्यूल्ड कास्ट	30,51,413	3
मुसलमान	7,83,697	99
सिख	14,999	13
		580

बम्बई लेजिस्टेटिव असेम्बली में श्री आर.एम. नालवाडे ने एक प्रश्न किया था उसका उत्तर माननीय श्री बी.जी. खेर ने इस प्रकार दिया था—

कम्युनिटी	1931 में जनससंख्या	गजेटेड अफसरों की संख्या	नान गजेटेड अफसरों की संख्या
डिप्रेस्ड क्लासेज़	18,55,148	14	8,201
मरहठा और अन्य	42,07,159	606	43,360
ब्राह्मण	9,18,120	1,370	21,448
मुसलमान	19,20,368	201	13,797
अन्य	...	886	18,658

इससे दिखाई देता है कि इसका आश्वासन मिलना चाहिये कि इस प्रकार का अन्याय न होगा और इसके लिये जल्दी कार्यवाही होगी। मैं हिन्दुस्तान सरकार और प्रान्तीय सरकारों से प्रार्थना करता हूं कि वे आर्टिकल 338 को हमारी भलाई के लिये काम में लावें और हरिजनों को उनकी संख्या के अनुसार नौकरियों में भरती करें।

दूसरी बात यह है कि इस सभागृह में हम हरिजनों की संख्या के अनुसार 60 सदस्य आने चाहिये थे परन्तु आज केवल 27 हैं। केजुअल वेकेन्सीज़ भरने के समय सभापति जी आपका कोटा पूरा करेंगे ऐसी मेरी आशा है।

श्री रामचन्द्र उपाध्याय (राजस्थान संघ): सभापतिजी, आज हम जो कुछ इस विधान के सम्बन्ध में कहें, वह हमें इस बात को देखकर कहना चाहिये कि तीन साल पहले हमारा देश भविष्य के लिये क्या सोचता था और क्या उम्मीद करता था कि हम कैसा विधान बना सकेंगे। मुझे अच्छी तरह याद है कि जिस वक्त यहां पर इंटेरिम गवर्नमेंट बनी थी उस वक्त रियासतों के लोग जेलों में पड़े थे और उत्तरदायी शासन के लिये ही सब कुछ कर रहे थे। दो साल पहले भी

हमको यह उम्मीद थी कि हमें उत्तरदायी शासन मिलेगा और हम अपनी रियासतों का अलग विधान बनायेंगे। समय बहुत तेजी से गुज़र रहा है और हम शायद उसके साथ नहीं चल पा रहे हैं। हमारे देखते देखते दो साल के अन्दर ही सब रियासतें, जो अलग अलग अपनी सत्ता रख रही थीं, एक हो गईं और एक होकर उनकी अलग-अलग यूनियनें बन गईं। जो कुछ हम साल भर पहले नहीं सोच सकते थे वह आज हमने करके दिखा दिया। मुझे याद है कि साल भर पहले मत्स्य कांग्रेस कमेटी का जलसा हो रहा था उसमें एक प्रस्ताव यह भी था कि हमारी यूनियन की एक विधान परिषद् बननी चाहिये और उस विधान परिषद् को हमारा विधान बनाना चाहिये। उस वक्त मैं भी वहां था मैंने कहा कि यह प्रतिक्रियावादी है कि जब हम सारे देश के लिये विधान बनाना चाहते हैं उस वक्त भिन्न भिन्न यूनियनों के लिये विधान बनाने की मांग करना उचित नहीं है। लोगों ने इस पर आश्चर्य किया कि ऐसी बात कैसे हो सकती है। लेकिन हमारे देखते देखते यह एक साल ही में मुमकिन हो गया। इस दृष्टि से अगर हम देखें कि हमारा विधान कितनी जल्दी बना, सारे देश के लिये एक विधान बना, तो यह हमारे लिये एक बड़े गौरव की बात है। हम देखते हैं कि हमारे पड़ोस का देश जो हमारा ही एक हिस्सा था, यानी पाकिस्तान विधान बनाने में हमसे बहुत पीछे है। यही नहीं कि उनका विधान अब तक नहीं बना बल्कि वहां छोटी-छोटी जो चार पांच रियासतें थीं वे भी अभी वैसी ही पड़ी हुई हैं। उनको भी अभी वह ढंग में नहीं ला सके हैं। जब उसकी तरफ हम देखते हैं और दो साल का पिछला अर्सा देखते हैं तो हमें महसूस होता है कि वास्तव में जो कुछ हमने कर लिया है हमारे लिये बड़े गौरव की बात है। हिन्दुस्तान के बहुत से लोग हमारे ऊपर यह लांछन लगाते हैं कि हमने विधान बनाने में बड़ी देर की। इसमें शक नहीं कि समय लगा लेकिन उन कठिनाइयों को जिनका हमें मुकाबिला करना पड़ा है देखते हुए कहना पड़ेगा कि समय ज़्यादा नहीं लगा और मैं तो यह महसूस करता हूं कि हमने छः महीने पहले विधान बना लिया होता तो हम आज जैसी चीज़ बना पाये हैं नहीं बना पाते। मैं यह भी महसूस करता हूं कि आज यदि इस विधान के अन्तिम वाचन में छः महीने और लगाते तो और भी अच्छा होता। इस बीच में हम अपनी मतदाताओं की सूची तैयार कराते, छपवाते, और हल्केबन्दी करते और तब हमें अन्तिम वाचन करना चाहिये था। मैं समझता हूं कि और भी छः महीने बाद अपना काम समाप्त करते तो हमारा विधान और भी पूर्ण होता लेकिन इसमें यह देखकर सन्तोष होता है, बहुत सी बातों को, जिनमें रद्दोबदल करने की आवश्यकता पड़ती रहेगी उनको तबदील करने की गुंजायश विधान में रखी है। यह कहना कि हमने कैसा विधान बनाया है कैसा नहीं बनाया है मैं समझता हूं कि हमारे लिये ज़्यादा संगत नहीं है। यह हमारी बनाई हुई चीज़ है और हमने अपनी सारी स्थिति को देखते हुए जो अच्छी से अच्छी चीज़ बना सकते थे वह बनायी है। यह काम आप आगे आने वाले लोगों और इतिहासकारों के लिये छोड़ सकते हैं कि हमने इस स्थिति तथा वातावरण में जो विधान बनाया है वह अच्छा किया या नहीं।

बहुत से लोगों का कहना है कि हमने इसमें बहुत सी बातें डिमाक्रेसी के उसूलों के खिलाफ रखी हैं, हमने नागरिकता के अधिकार को खत्म कर दिया

[श्री रामचन्द्र उपाध्याय]

है। मैं तो यह कहूंगा कि आप इस विधान को इस दृष्टि से न देखें कि अमेरिका आदि वेर्स्टन कंट्रीज़ में आज डिमाक्रेसी कितनी आगे बढ़ी हुई है और हम उससे कितने पीछे हैं। इस दृष्टि से अगर देश इसे देखे तो हमारे साथ अन्याय करेगा। लोगों को यह सोचना चाहिये कि उन देशों के लोगों को जितना अपने देश से प्रेम है, उनको अपने प्रजातंत्र के लिये प्रेम है, जितना अपने अधिकारियों तथा कर्तव्यों के लिये प्रेम है क्या उतना हम लोगों को भी है। उत्तर स्पष्ट है कि नहीं है। तो फिर उनसे आज क्यों तुलना की जाये। जिस दिन हमारी आजादी और प्रजातंत्र मज़बूत हो जायेंगे उस दिन हम अपने विधान को जिस तरह से चाहेंगे तबदील करके उसे आगे बढ़ा सकेंगे। और तभी दूसरे देशों से अपने विधान की तुलना करना ठीक होगा, आज नहीं।

हम को तो यह देखना है कि कितने हज़ार सालों की गुलामी के बाद हमने आज़ादी पाई है। अभी तो लोगों को अपने देश के लिये अपने राष्ट्र के लिये प्रेम भी पैदा नहीं हुआ है। आज तो देश की हालत इस कदर खराब हो रही है कि हमें कभी कभी यह शक होने लगता है कि यह विधान के अन्दर भी हम अपनी आज़ादी को, अपने प्रजातंत्र को, कायम रख सकेंगे या नहीं। एक तरफ हम देखते हैं कि राजा लोग अभी बदस्तूर मौजूद हैं। मैं मानता हूं कि सरदार पटेल ने या हमारी हुकूमत ने रियासतों को खत्म कर दिया है, लेकिन इससे ही हमको धोखे में आकर आंखें बन्द नहीं कर लेनी चाहिये। सत्य यह है कि चाहे रियासतें खत्म हो गईं मगर राजा अभी मौजूद हैं। रियासतों के खत्म होने से राजा लोग तो खत्म नहीं हुए। उनके पास पूरी शक्ति और धन मौजूद है। वह यह स्वप्न देखते हैं कि अगर मरकज़ी हुकूमत कमजोर पड़े तो फिर उनका समय आवेगा। हम भूले नहीं हैं कि डेढ़ साल पहले हमारे महाराजा यह स्वप्न देखते थे कि वह दिल्ली के बहुत नजदीक हैं और अगर मौका होगा तो वह लाल किले पर अपना झंडा गाड़ेंगे। इसलिये उन्होंने हवाई जहाज़ भी खरीद रखे थे और सेना भी तैयार की हुई थी। राजा लोग इस तरफ देख रहे हैं और मौके की तलाश में हैं। दूसरी तरफ कुछ ऐसे लोग हैं जो कि अपनी जाति को ही देश समझते हैं देश रहे चाहे जाये। उनकी जाति के हाथ में सत्ता आ जाये। राजपूत चाहते हैं कि उनका ही राज हिन्दुस्तान में कायम होना चाहिये। कुछ जाट राज के लिये स्वप्न देखते हैं। कुछ समझते हैं कि अहीरों का राज कायम करें और इसी दृष्टि से वे भविष्य को देखते हैं। मैं पूछता हूं कि क्या यह देश के लिये कम खतरे की चीज़ है। इसके अलावा कुछ लोग वह हैं जो देश में अराजकता फैलाने में अपना भला समझते हैं कुछ लोग वे हैं जो समझते हैं कि समस्त देश पर उनके प्रान्त का ही शासन रहना चाहिये और उन्हीं की सत्ता होनी चाहिये। कोई महाराष्ट्र के राज्य का स्वप्न देखते हैं तो दूसरे कुछ और ही सोचते हैं। कितने खतरे हमारे सामने इस वक्त मौजूद हैं उनको देखते हुए हमें इस विधान की परीक्षा करनी चाहिये। इसमें शक नहीं कि यदि हमारी स्थिति अच्छी होती तो हम और भी अच्छी बातें रख सकते थे। यह बात नहीं है कि हमको आज़ादी और नागरिकता से प्रेम नहीं है। हम भी चाहते हैं कि कोई आदमी जब तक कानून के अनुसार उसका जुर्म साबित न हो जाये उस वक्त तक उसे जेल में बन्द नहीं किया जाना चाहिये

और प्रत्येक नागरिक को पूर्ण आजादी होनी चाहिये। लेकिन अपनी स्थिति को देखते हुए हमने जो अधिकार रखे वे भी कम नहीं हैं। इस स्थिति में तो हमें इस विधान को दस साला बन्दोबस्त ही समझना चाहिये। दस साल के बाद यदि हमारी आज़ादी कायम रह सके, जैसी कि मुझे पूरी उम्मीद है कि रह सकेगी, और हमारे प्रजातंत्र की जड़ें मजबूत हो सकें तो दस साल के बाद हम इसे बदल कर काफी प्रगतिशील बना सकेंगे। और फिर तुलना करना उचित होगा। समय को देखते हुए मैं इसमें दो तीन बातें ऐसी देखता हूं जो बहुत ही सुन्दर हैं और उन्हें प्रजातंत्र के स्वस्थ बीज कहा जा सकता है।

उचित जल और वायु मिलने पर वह बीज पौधे का रूप और पौधा पेड़ का रूप धारण कर लेगा। एडल्ट फ्रैंचाइज की बिना पर बनी पार्लियामेंट को समस्त अधिकार दिये गये हैं। इसी से हम अपने प्रजातंत्र को सुरक्षित रख लेंगे और फिर भविष्य के लिये हमको डर भी कोई नहीं है। इसके अलावा धर्म के नाम पर लोग किस कदर देश के अन्दर बवन्डर फैला रहे हैं। वेद शास्त्र की दुहाई देकर जनता को बहका रहे हैं। मज़हब के नाम पर कायम हुए पाकिस्तान से धर्म के नाम पर ही हिन्दुओं और गैर मुस्लिमों को निकाल दिया गया। ऐसे वक्त पर हमने सिक्यूलर स्टेट बनाया है, इसका नतीजा यह हुआ कि लोग हमें कांग्रेस वालों को दोषी समझने लगे। हमारे लिए यह कम साहस का काम नहीं था। हमने इसके लिये सब कुछ आलोचनायें बरदाश्त की हैं। इसके लिये आज भी कांग्रेस और हमारे खिलाफ धर्म के नाम पर प्रचार किया जाता है और हमारी आलोचना की जाती है। हमने सब को नागरिकता के अधिकार बराबर दिये हैं। स्त्रियों को बराबर के अधिकार दिये हैं जो कि इंग्लैंड और अमरीका बहुत दिनों बाद कर पाये थे। हमने धर्म के प्रचार करने की पूरी आज़ादी दी है। अगर हम देखें तो यह बातें हमारे लिये काफी गौरव की हैं।

रियासतों के सम्बन्ध में मैं समझता हूं कि हमने जो कुछ किया है वह बहुत ही गौरव की बात है और इसके लिये विदेशी लोग भी आश्चर्य करते हैं कि हमने कैसे कर लिया।

दो तीन बातें मैं यह अवश्य महसूस करता हूं कि ऐसी हैं कि जिनको हम और अच्छी तरह कर सकते थे। हमने माना कि हम रियासत के लोग और प्रान्तों के लोग थोड़े पिछड़े हुए हैं लेकिन हमारे वास्ते यह शर्त लगाना कि हम दस साल तक सेंटर के नियंत्रण में रहेंगे यह कुछ ज्यादती है। ऐसा करने से हमारे यहां डिमाक्रेसी को चलाना कठिन हो रहा है और हो जायेगा। हम अनुभव कर रहे हैं कि हमारे यहां ड्यूअल गवर्नमेंट हो रही है। सेंटर के सिविल सर्विस वाले अपना दृष्टिकोण अलग रखते हैं और वैसी ही अपनी हुकूमत करते हैं और दूसरी तरफ हमारे मिनिस्टर अपनी अलग दृष्टि से हुकूमत करते हैं और उसका परिणाम भयानक होता है। वे एक दूसरे पर दोष डालने की कोशिश करते हैं जिससे शासन बहुत ज्यादा खराब होता है। आदरणीय सरदार पटेल के यह विश्वास दिलाने पर कि इस का इस्तेमाल तभी किया जायेगा जब बहुत आवश्यकता होगी, हमने इसको मान लिया है, मगर इस चीज को बहुत ही कम काम में लाया जाये और अगर हो सके तो न काम में लाया जाये। इसी में देश की भलाई है।

[श्री रामचन्द्र उपाध्याय]

दूसरी चीज यह है कि हमने सेंटर को बहुत ज़्यादा अधिकार व विशेष अधिकार दिये हैं। प्रान्तों को तो शक्तिहीन बना दिया है। हम समझते हैं कि यह एक बड़े दोष की चीज़ है। इससे हमारी डिमाक्रेसी को धक्का लगेगा, लेकिन समय को देखते हुए हमने इसको स्वीकार किया है। मैं आशा करता हूं कि हमारी सेंट्रल गवर्नमेंट उन विशेष अधिकार को जितना भी कम हो सकेगा इस्तेमाल में लायेगी। इससे हमारे प्रजातंत्र की उन्नति होगी।

अन्त में मैं यह भी कह देना चाहता हूं कि इस विधान की आड़ में हमारे प्रान्त पर एक ज्यादती की गई है। मैं महसूस करता हूं कि इस विषय में मुझे भी कुछ कहना चाहिये। मन चाहे ढंग से सिरोही को बांट कर उसका एक हिस्सा बम्बई में मिला दिया गया है। बिना जनता से पूछे ऐसा करना अन्याय है। अगर इसी तरह से से हम डिमाक्रेसी को चलायेंगे तो खतरा है। सिरोही बहुत मामूली सी चीज़ है और इसके बंट जाने से कोई ऐसी बात नहीं है कि राजस्थान मिट जायेगा या खत्म हो जायेगा लेकिन सवाल भावनाओं का और काम करने के तरीके का है। उसको जनता से बिना पूछे इस तरह से बांट देना अनुचित है। फिलहाल इसे आप गुजरात में रख सकते थे या राजस्थान में रख सकते थे इससे क्या फर्क पड़ता और दो या चार साल बाद लोगों से पूछकर जहां वे चाहते मिला सकते थे। इसको जितनी जल्द हो सके ठीक करने की कोशिश करनी चाहिये। जनता की इच्छा के विरुद्ध कार्य करने से प्रजातंत्र को धक्का लगता है और लोगों को अश्रद्धा पैदा होती है।

अन्त में मैं यह कहना चाहता हूं कि कम से कम थोड़े दिनों के लिए हमारा यह विधान बहुत अच्छा है और इस पर हम चले तो हमारी आजादी व प्रजातंत्र सुरक्षित रहेगी और कुछ समय में ही हम अपने देश को महान बना सकेंगे, इसलिये इसे स्वीकार करना ही उचित है।

***श्री रामचन्द्र गुप्त** (संयुक्त प्रान्त: जनरल): अध्यक्ष महोदय, मैं आपका अत्यन्त आभारी हूं कि आपने इस प्रस्ताव पर बोलने का मुझे मौका दिया और इसके लिए चन्द मिन्टों का समय दिया।

यह संविधान जो देशवासियों को आज एक सतत एवं दीर्घकालीन संघर्ष के बाद और अनेक कष्टों को झेलने के बाद उपलब्ध हुआ है, वह अपने देश के इतिहास में स्वतंत्रता के एक महाधिकार पत्र के रूप में सदा अंकित रहेगा। सुतरां अपने इस संविधान पर हम अभिमान कर सकते हैं और मुझे इसमें रंचमात्र भी संदेह नहीं है कि हमारी भावी संततियां 26 जनवरी सन् 1950 के दिन को जिस दिन की यहां स्वातंत्र्य सूर्य का उदय हुआ है, हमेशा पवित्र मानती रहेंगी।

अपना यह संविधान जिसमें करीब चार सौ खंड रखे गये हैं, तीन वर्ष के कठोर परिश्रम, गम्भीर चिन्तन और बहुत कुछ समझौते के फलस्वरूप निर्मित हो पाया है। इसमें शक नहीं कि सारा देश कृतज्ञ अनुभव करेगा उन लोगों का संविधान निर्माण में हाथ रहा है। हम कृतज्ञ हैं मसौदा समिति के और खास कर के डॉ. अम्बेडकर

के और आपके श्रीमान्। आप दोनों महानुभावों ने यह दिखला दिया है कि सब को सन्तुष्ट करने में आप लोग कितना सौजन्य बरत सकते हैं।

अपने इस संविधान पर सदस्यों ने हजारों तो संशोधन पेश किये और एक दीर्घकालीन विचार और उत्तेजनापूर्ण वाद विवाद के फलस्वरूप आज इस रूप में यह हमारे सामने आ पाया है। वस्तुतः संविधान का एक भी शब्द ऐसा न होगा जिस पर सभा के एक न एक सदस्य का ध्यान न गया हो। मैं तो यहां तक कहूंगा कि इसके प्रत्येक विराम और अर्धविराम आदि के चिन्हों पर भी अपने सतत जागरूक मित्र श्री नज़ीरुद्दीन अहमद ने समुचित ध्यान दिया है। यह सच है कि इसकी सभी बातों को हम सर्वसम्मति से स्वीकार नहीं कर पाये हैं पर इसके सभी अनुच्छेदों और खण्डों को सभा के एक बहुत बड़े बहुमत का समर्थन प्राप्त रहा है। प्रायः सभी महत्वपूर्ण और विवादग्रस्त मसलों को यहां कई बार इसलिये रखा गया है कि उन पर पूरी तरह विचार किया जा सके और अगर सम्भव हो तो उस पर सब का समर्थन प्राप्त किया जा सके।

संक्षेप में मैं यह कह सकता हूं कि प्रस्तुत संविधान तैयार हो पाया आपस के कई सुखद समझौतों के फलस्वरूप और इन समझौतों को भी हम मान सके हैं इसलिये कि सब में परस्पर सहयोग की सद्भावना रही है जिसका कि सभी सदस्यों ने यहां पर्याप्त परिचय दिया है। ऐसी स्थिति में तो इस बात की तो आशा नहीं की जा सकती कि संविधान में रखे गये सभी प्रावधानों के सम्बन्ध में सभी सदस्य समान रूप से सन्तुष्ट होंगे। यही कारण है जो यहां वक्ताओं ने संविधान के प्रति सन्तोष और असन्तोष दोनों ही व्यक्त किये हैं। मैं स्वयं संविधान की प्रत्येक बात से सहमत नहीं हूं पर किसी प्रतिवाद की रंचमात्र आशंका किये बिना मैं यह कह सकता हूं कि सभा के अधिकांश लोगों का और महत्व रखने वाले वर्गों का इसे समर्थन प्राप्त है।

इसमें शक नहीं कि संविधान का जो मूल मसौदा तैयार किया गया था उसमें अब काफी परिवर्तन और बुनियादी परिवर्तन कर दिये गये हैं। किन्तु देश की बदली हुई स्थिति में ये परिवर्तन अनिवार्य थे। संविधान निर्माण का काम हमने प्रारम्भ किया था सन् 1946 के दिसम्बर के महीने में जब देश अविभक्त था और उस समय जो स्थिति थी उसमें देश को एक भिन्न तरह के संविधान की आवश्यकता थी। बहुत सी बातें ऐसी थीं जो पहले महत्व रखती थीं पर देश विभाजन के फलस्वरूप इनका अब कोई महत्व नहीं रह गया। देश विभाजन के पूर्व सोचा यह गया था कि सभी प्रान्तों को, बचाव तथा यातायात आदि कई बातों को छोड़ कर अन्य सभी बातों में केन्द्र के नियंत्रण से सर्वथा मुक्त और स्वतंत्र रखा जायेगा। तब यह सोचा गया कि अवशिष्ट अधिकार निहित रखे जायें प्रादेशिक घटकों में। किन्तु विभाजन के कारण अब यह आवश्यक हो गया है कि केन्द्र को यथाशक्य शक्तिशाली बनाया जाये। संविधान में तदनुसार अब परिवर्तन कर दिया गया है और मेरा विश्वास है कि इस परिवर्तन से सुधार ही हुआ है। संविधान के विरुद्ध यह जो आलोचना की जाती कि अधिकारों को केन्द्रित करने पर हमें कम ध्यान देना चाहिये था और उनको विकेन्द्रित करने पर हमें अधिक ध्यान देना चाहिए था, इससे मैं सहमत नहीं हूं। इस आलोचना से एक बहुत सीमित अंश में ही मैं सहमत हो सकता हूं। आज एक सुदृढ़ केन्द्रीय शासन की ज़माने को ज़रूरत है।

[श्री रामचन्द्र गुप्त]

मैं यह भविष्यवाणी करता हूं कि आगे चलकर भविष्य आप को बतायेगा कि केन्द्रीकरण की जो व्यवस्था की गई वह हमारे लिए एक वरदान है। यहां सदा से ही सबसे बड़ी समस्या यही है कि देश को एक किस तरह किया जाये, उसे सुसम्बद्ध और दृढ़ किस तरह बनाया जाये। हमारा इतिहास भी यही बतलाता है कि हमारी सबसे बड़ी ज़रूरत यही रही है कि समस्त भारत एक-सूत्र में बंध कर सुदृढ़ रहे। इस देश के लिये एक सर्वथा केन्द्रित और एकात्मक-शासन व्यवस्था ही उपयुक्त हो सकती है। फिर भी आगे चल कर यदि अनुभव के आधार पर हमें यह मालूम होता है कि कई बातों के बारे में प्रादेशिक घटकों को और अधिकार प्राप्त रहने चाहियें तो मेरा ख्याल यह है कि अनुच्छेद 368 के अधीन संविधान में संशोधन करने में हमें कोई कठिनाई नहीं हो सकती है।

संविधान के मूल मसौदे में दूसरा सारवान परिवर्तन करना पड़ा इस कारण से कि छः सौ और कई देशी रियासतों को भारत राज्य संघ में मिला दिया गया है। इस सम्बन्ध में किये गये परिवर्तन को क्या कोई बुरा बता सकता है? इन देशी रियासतों को भारत के संघ-राज्य में मिलाने का समस्त श्रेय प्राप्त है हमारे परम-प्रिय उप-प्रधान मंत्री सरदार पटेल को जिन्होंने यह आश्चर्यजनक काम पूरा कर दिया ऐसी थोड़ी अवधि के अन्दर ही। इन रियासतों के नरेश भी हमारे धन्यवाद के पात्र हैं जिन्होंने मातृभूमि के हित के लिए स्वेच्छा से अपने शासनाधिकार का परित्याग कर दिया है।

अब हम सब इस बात पर गर्व कर सकते हैं कि हमारा देश एक है, हमारी भाषा एक है और संविधान एक है जिसके अधीन ऊंच-नीच, छूत अछूत, बहुसंख्यक, अल्पसंख्यक सब का ही, शासन किया जायेगा। अपना संविधान किसी तरह का कोई भी विभेद नहीं बरतता है। उसने देश से अस्पृश्यता को उठा दिया है। सभा के सभी अनुसूचित जातियों के सदस्यों ने संविधान का सहर्ष स्वागत किया है और अब हम यह निर्णय कर सकते हैं कि इन लोगों के दृष्टिकोण से भी अपना संविधान सर्वथा सन्तोषप्रद है। सतर्कतामूलक उपाय के तौर पर संविधान ने अनुसूचित जातियों को ऐंग्लो इंडियनों को केवल एक संक्षिप्त अवधि के लिए ही कुछ विशेषाधिकार भी दिये हैं।

संविधान में महिलाओं को पुरुषों के समान स्तर पर ला दिया है और हम यह कह सकते हैं कि एक मात्र हमारे ही संविधान में स्त्रियों को बिना किसी प्रतिबंध के पुरुषों के समान अधिकार दिये गये हैं।

संविधान के विरुद्ध दूसरी शिकायत यह की जाती है कि यह बहुत ही लम्बा हो गया है। इस शिकायत में भी कोई औचित्य नहीं है। हमारा देश एक अद्‌भुत देश है और हमें अनेक तरह की तात्कालिक आवश्यकताओं के लिये तथा विभिन्न परस्पर विरोधी हितों के लिये व्यवस्था करनी होगी। ऐसी स्थिति में संविधान का वृहत् होना सर्वथा स्वाभाविक है। क्योंकि विस्तार की अनेक बातों के लिये इसमें उपबंध रखने ही होंगे। विस्तार की उन विभिन्न बातों को जिनका प्रश्न सम्भवतः प्रायः ही उठा करेगा, संविधान में स्थान देने से इसका वृहदाकार होना स्वाभाविक

है। फिर इन सब बातों के अलावा, भारत-शासन अधिनियम 1935 तथा अन्य पुराने अधिनियमों के तुलनात्मक अध्ययन से लाभ उठाते हुए हमने उनके प्रायः सभी जरूरी उपबंधों को भी इसमें अपनाया है। हमने ब्रिटेन, अमरीका, आस्ट्रेलिया तथा अन्य देशों के संविधानों से भी बहुत सी अच्छी बातें ली हैं और अन्य संविधानों के दोषों से भी अपने को बचाने की कोशिश की है। कई माननीय मित्रों ने यह कहा है कि विभिन्न संविधानों से इधर उधर के बहुत से उपबंध लेकर किसी तरह उन्हें जोड़ जाड़ हमने अपना यह संविधान तैयार किया है। पर बात ऐसी नहीं है। वास्तविकता यह है कि अन्य संविधानों में जो भी अच्छी बातें हैं वह सब अपने संविधान में रखी गई हैं और देश की अपनी अद्‌भुत आवश्यकताओं के उपयुक्त इसे तैयार किया गया है।

इस संविधान की दूसरी अच्छाई यह है कि पृथक निर्वाचन की तथा स्थान रक्षण की व्यवस्था को (कुछ लोगों के बारे में एक अल्पकालीन अवधि तक भी जारी रखने के सिवाय) बिल्कुल उठा दिया गया है।

इस संविधान में, पहली बार इस बात के लिए उपबंध रखा गया है कि कतिपय स्थितियों में मृत्यु-दण्ड के विरुद्ध उच्चतम न्यायालय में अपील की जा सकती है। अवश्य ही इस सम्बन्ध में यह बहुत आगे नहीं बढ़ सका है क्योंकि उच्च न्यायालय द्वारा दिये गये या अनुमोदित किये गये मृत्यु-दण्ड के सभी निर्णयों के विरुद्ध अपील की व्यवस्था इसमें नहीं की गई है। जो भी हो, मृत्यु दण्ड को बिल्कुल ही उठा देने की बात को मैं अधिक पसन्द करता।

ज़मींदारी को उठाने का सवाल आज देश में अरसे से चल रहा है। इसके लिये अगर चालू बाज़ार भाव से प्रतिकर की रकम चुकानी पड़ती तो यह घटकों के बूते के बाहर की बात हो जाती। पर अपने संविधान में समुचित प्रतिकर की बात कही गई है और अनुच्छेद 31 में यह कहा गया है प्रतिकर की रकम कतिपय सिद्धान्तों के आधार पर निश्चित की जायेगी। इस व्यवस्था के कारण ज़मींदारी प्रणाली का यहां से आमल उठ जाना अब सम्भव हो गया है।

व्यक्ति के दैहिक स्वातंत्र्य तथ उसके प्राण के रक्षण के सम्बन्ध में संविधान में जो अनुच्छेद (21) रखा गया है वह एक ऐसा अनुच्छेद है जिसने अधिकांश लोगों का ध्यान और खास करके वकीलों और न्यायाधीशों का ध्यान अपनी ओर आकृष्ट किया है। इनका कहना यह है कि जिस रूप में यह अनुच्छेद लिपिबद्ध किया है उसमें उससे व्यक्ति के अधिकारों की समुचित रूप से सुरक्षा न हो पायेगी। किन्तु उनकी यह आशंका सर्वथा औचित्यशून्य है क्योंकि कोई भी शासन न तो ऐसा कानून ही पास कर सकता है और न पास करके उसे मनमाने गैर ज़िम्मेदाराना तौर पर लागू ही कर सकता है। अनुच्छेद के अधीन विधान मण्डल की अनुमति आवश्यक ठहराई गई है। इसमें शक नहीं कि यह उपबंध इतना व्यापक है कि इसके अनुसार देश के विधान मण्डलों को व्यापक अधिकार मिल जा सकते हैं पर मुझे विश्वास है कि ऐसे असीम अधिकारों को प्रयोग उसी हालत में किया जायेगा जब कि तात्कालिक स्थिति को देखते हुए उनके प्रयोग की कत्तई ज़रूरत ही हो जाये।

[श्री रामचन्द्र गुप्त]

अन्त में मैं सभा के सदस्यों से और उनके द्वारा देशवासियों से यह अनुरोध करूंगा कि इस संविधान को वह एक सच्चे भक्त की भावना से कार्यान्वित करें। अगर हम इस संविधान पर अमल करते हैं और एक दूसरे को सहयोग देते हैं तो हमें आज इस संविधान की जो बड़ी बड़ी खामियां दिखाई दे रही हैं वह धीरे धीरे अब अपने आप गायब हो जायेंगी। इस संविधान की शपथ लेकर हमें यह प्रतिज्ञा करनी चाहिये कि हम इस संविधान को सदा रक्षित रखेंगे और इसे कायम रखेंगे, चाहे इसके लिए हमें कितनी भी बड़ी कीमत क्यों न चुकानी पड़े।

***अध्यक्ष:** सभा अब कल प्रात: 10 बजे तक के लिए स्थगित की जाती है।

इसके पश्चात् सभा शुक्रवार 25 नवम्बर सन् 1949 ई. के प्रात: 10 बजे तक के लिये स्थगित हो गई।

———————

GIPD–HS-253 PSD–17-1-53–320